एक दिन का मेहमान

काशीनाथ गोविन्द जोगलेकर



दिन का मेहमान

काशीनाथ गोविन्द जोगलेकर



एक दिन का मेहमान

काशीनाथ गोविंद जोगलेकर

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

प्रथम संस्करण : कार्तिक 1891 (नवंबर 1969)
द्वितीय संस्करण : फाल्गुन 1898 (मार्च 1977)
तृतीय संस्करण : चैत्र 1919 (मार्च 1997)
चतुर्थ संस्करण : शक 1921 (जनवरी 2000)
पंचम संस्करण : शक 1924 (2003)

ISBN : 81-230-0538-5

मूल्य : 50 रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित।

विक्रय केन्द्र • प्रकाशन विभाग

- पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली-110001
- सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001
- प्रथम तल, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्प्लेक्स, नई दिल्ली-110003
- कामर्स हाउस, करीम भाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई-400038
- 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कोलकाता-700069
- राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600090
- बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004
- प्रेस रोड, निकट गवर्नमेंट प्रेस, तिरुअनंतपुरम्-695001
- 27/6, राममोहन राय मार्ग, लखनऊ-226001
- प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034
- अंबिका काम्प्लेक्स, प्रथम तल, पालदी, अहमदाबाद-380007
- नवजन रोड, उजान, बाजार, गुवाहाटी-781001
- ब्लाक नं. 4 प्रथम मंजिल, गृहकल्प काम्प्लेक्स, एम.जे. रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001

विक्रय काउंटर • पत्र सूचना कार्यालय

- 80, मालवीय नगर, भोपाल-462003
- सी.जी.ओ. काम्प्लेक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर, (म.प्र.)
- बी-7बी, भवानी सिंह मार्ग, जयपुर-302001 (राजस्थान)

मुद्रक : तारा आर्ट प्रेस, बी-4, हंस भवन, बहादुर शाह ज़फ़र मार्ग, नई दिल्ली-110002 द्वारा मुद्रित

दो शब्द

श्री जोगलेकर जी ने इस पुस्तिका में महाराष्ट्र के इतिहास की कुछ प्रसिद्ध कहानियां एकत्र करके हिंदी पाठकों के लिए सरल भाषा में पेश की हैं। इनमें से अधिकांश वास्तविक घटनाएं भी हैं। उस स्फूर्तिदायक इतिहास की लाजवाब घटनाएं भी इसमें वर्णित हैं, जब शिवाजी के जमाने से लेकर मराठों ने मुगल साम्राज्य से लगातार, अपने देश और संस्कृति की स्वतंत्रता के लिए लड़ाई की। यह लड़ाई भीषण थी, इसमें बड़े-बड़े स्वार्थ त्याग करने पड़े। प्रदेश के प्रदेश तबाह हो गए। आखिरकार मुगल साम्राज्य और सम्राट दोनों इसमें परास्त हुए।

यह इतिहास बड़ा उज्जवल है और हमारे देश के स्वतंत्रता-संग्रामों में यह भी एक जबर्दस्त संग्राम है। इसकी कुछ पराक्रमपूर्ण घटनाएं सामने आने से पाठक को इतिहास की कुछ झांकी मिलेगी। जोगलेकर जी का यह प्रयत्न सराहनीय है।

—बालकृष्ण केसकर

सूची

एक दिन का मेहमान

आज से लगभग 300 वर्ष पहले की बात है जब बादशाह औरगंज़ेब दिल्ली के सिंहासन पर आसीन थे। घटना महाराष्ट्र की है। महाराष्ट्र के प्रहरी सह्याद्रि पर्वत पर घनघोर वर्षा हो रही थी। शाम होने में अभी देर थी।

ऐसे समय एक अधेड़ किसान और उसकी पत्नी अपनी झोंपड़ी में बैठे सुख-दुख की बातें कर रहे थे। वर्षा के कारण किसान खेत पर न जा सका था। पत्नी खाना बना रही थी और वे दोनों मुगलों के अत्याचार के बारे में चर्चा कर रहे थे।

एकाएक झोंपड़ी के बाहर कुछ आहट सुनाई पड़ी। किसी ने दरवाजा थपथपाया और आवाज दी। अंदर कोई है?

किसान ने दरवाजा खोलकर बाहर झांका। बाहर बीस-बाईस वर्ष का एक युवक खड़ा था। वह मझोले कद और गोरे रंग का था। उसका शरीर गठा हुआ था और आंखों से आत्मविश्वास टपक रहा था। वर्षा से उसके कपड़े सराबोर हो चुके थे। वह थका हुआ था लेकिन तब भी झोंपड़ी का दरवाजा खुलते ही उसका हाथ अनायास कमर से बंधी तलवार की मूठ पर चला गया। सामने एक सीधे-सादे किसान को खड़ा देख वह निश्चिंत हुआ।

—क्या बात है भाई? किसान ने पूछा।

—एक राही हूं! रास्ता भूल गया हूं। वर्षा में भीग गया हूं। मेरा घोड़ा भी थक गया है। आज की रात बिताने के लिए जगह ढूंढ़ रहा हूं। युवक ने जवाब दिया।

किसान कुछ उत्तर दे तब तक उसकी स्त्री भी दरवाजे पर आ खड़ी हुई। युवक की हालत देख, उसने कहा— भाई , तुम अंदर तो आ जाओ। बारिश में कब तक भीगते खड़े रहोगे?

एक अनजान आदमी को इस तरह आश्रय देना किसान को शायद पसंद न था, लेकिन वह अजनबी के सामने अपनी पत्नी की बात भी नहीं काटना चाहता था। उसने भी युवक को अंदर बुला लिया।

युवक के अंदर आने पर किसान ने उसे कुछ कपड़े बदलने को दिए और उसके भीगे कपड़े सुखाने के लिए आग के सामने लटका दिए। घोड़े को उसने आंगन में एक ओर बांध दिया और उसके आगे घास डाल दी।

किसान ने पूछा— ऐसी वर्षा में कहां निकल पड़े?

—कुछ काम था। जब निकला था, तब वर्षा नहीं हो रही थी। रास्ता भूल गया और फिर तो ऐसी झड़ी लगी कि आगे चलना मुश्किल हो गया।

इतने में किसान की स्त्री बोली— भूख लगी होगी, खाना खा लो। खाना तैयार है।



वह बोली —तुम भी शिवाजी की तरह निरे बुद्धू निकले। ....कढ़ी-भात खाना हो तो पहले भात में गढ़ा बनाना चाहिए और स्वराज्य कायम करना हो तो पहले किलों पर कब्जा करना चाहिए।

—खाना रहने दो। मैं सोऊंगा। युवक ने उत्तर दिया।

—यह कैसे हो सकता है? हम गरीब अवश्य है। लेकिन घर आए अतिथि को भूखा थोड़े ही सोने देंगे। जो कुछ रूखा-सूखा बना है वही तुम भी खा लो।

युवक इस आग्रह को न टाल सका। स्त्री ने अपने पति के लिए और उसके लिए पत्तल लगा दी और भात परोसा। कढ़ी उबल रही है। अभी लाकर परोसती हूं। उसने कहा।

शीघ्र ही वह कढ़ी ले आई और पति को परोसने के बाद युवक की पत्तल के पास आकर रुकी।

—बस थोड़ी-सी दीजिए। युवक ने कहा।

स्त्री ने भात पर कढ़ी परोसी तो पत्तल पर बहने लगी। युवक एक ओर भात की मुंडेर खड़ी कर कढ़ी रोकता तब तक वह दूसरी ओर बहने लगती। युवक को समझ में न आता था कि वह क्या करे। उसकी परेशानी देखकर किसान पति-पत्नी को हंसी आ गई। किसान तो चुप रहा लेकिन स्त्री चुप न रह सकी। वह बोली—तुम भी शिवाजी की तरह ही निरे बुद्धू निकले।

—क्यों क्या हुआ? युवक ने पूछा।

स्त्री ने कहा—भात पर कढ़ी लेने से पहले भात में गढ़ा कर लेना चाहिए। नहीं तो कढ़ी रुक नहीं सकती, तुम्हें इतना भी नहीं मालूम?

किसान ने पत्नी से कहा- तुम भी अजीब हो। बड़े आदमी थाली और कटोरी में खाते हैं। अगर उन्हें पत्तल में खाना न आए, तो इसमें हंसने की क्या बात है?

—खैर, मुझे ठीक से कढ़ी-भात खाना नहीं आता इसलिए मैं तो बुद्धू हूं, लेकिन यह शिवाजी कौन है? उसे आप बुद्धू क्यों कहतीं हैं ? युवक ने पूछा।

किसान ने बात टालते हुए कहा— यह तो यों ही बड़े आदमियों की बात में पड़ती है।

पर युवक मानने वाला नहीं था। उसने फिर पूछा—मुझे भी सुनने दीजिए कि शिवाजी क्यों बुद्धू है?

किसान ने अपनी पत्नी को इशारे से रोकना चाहा, लेकिन वह रुकने वाली नहीं थी। बोल उठी— शिवाजी अपना राज्य कायम करना चाहता है और इसलिए सुलतान से लड़ता है।

युवक ने पूछा — तो तुम उसे इसलिए बुद्धू समझती हो कि बीजापुर का सुलतान और मुगल बादशाह दोनों बहुत शक्तिशाली हैं और उनसे लड़ना पागलपन है?

—नहीं ऐसा बिलकुल नहीं है। शिवाजी बहादुर है और सैकड़ों वर्षों के बाद देश में ऐसा शूर पैदा हुआ है, जो स्वराज्य कायम करना चाहता है।

—फिर तुम उसे बुद्धू क्यों कहती हो?

—इसलिए कि उसका तरीका गलत है।

—वह कैसे?

—वह कुछ गांव तो कब्जे में कर लेता है, लेकिन किलों पर कब्जा नहीं करता। सुलतान की फौज मौका देखकर मारधाड़ करती हुई किलों से बाहर निकलती है और शिवाजी को पीछे हटना पड़ता है। वह यह नहीं समझता कि स्वराज्य कायम करना है तो पहले किलों को अपने कब्जे में करना चाहिए।

—लेकिन किलों को लेने में बहुत समय लगता होगा।

—ठीक है। लेकिन किलों पर विजय पाए बिना स्वराज्य-स्थापना का विचार वैसा ही है जैसे भात में गढ़ा किए बगैर उस पर कढ़ी लेना। जैसे कढ़ी जल्दी बह जाती है, वैसे ही प्रदेश भी हाथ से निकल जाता है। कढ़ी-भात खाना हो तो पहले भात में गढ़ा बनाना चाहिए और स्वराज्य कायम करना हो तो पहले किलों पर कब्जा करना चाहिए। जिसके पास किले होंगे उसी का महाराष्ट्र में राज्य होगा।

इस बात को कई वर्ष बीत गए। किसान दंपति बूढ़े हो गए। महाराष्ट्र में शिवाजी का राज्य कायम हो गया था और राज्याभिषेक की तैयारियां हो रही थीं। एक दिन शाम को बूढ़ा किसान अपनी झोंपड़ी के बाहर बैठा हुआ था कि कुछ घुड़सवार वहां आकर रुके। उन्होंने किसान से नाम पूछा और जब उसने अपना अता-पता बताया तब घुड़सवारों के सरदार ने कहा—ठीक है। यही वह आदमी है।

किसान ने डरते-डरते पूछा —क्या बात है? क्या मुझ से कोई कसूर हुआ है?

सरदार ने कहा—जी नहीं। हमें छत्रपति शिवाजी महाराज की आज्ञा हुई है कि हम आपको यह भेंट दें और आग्रह करें कि आप दोनों उनका राज्याभिषेक देखने रायगढ़ पधारें।

उसने एक अनुचर को इशारा किया और वह दो चांदी के थाल ले आया। एक में किसान के लिए धोती, कुर्ता, पगड़ी, दुपट्टा और रुपये रखे थे। दूसरे थाल में उसकी पत्नी के लिए साड़ियां और आभूषण थे।

किसान ने पूछा—मैं तो कुछ समझ नहीं पाया। हम लोगों को महाराज क्यों इतना सम्मान दे रहे हैं? हम तो उनको जानते भी नहीं।

सरदार ने कहा—महाराज ने यह बात पहले ही सोच रखी थी। उन्होंने कहा है कि मैं आपसे और माताजी से केवल इतना कहूं कि कढ़ी-भात वाला सबक सीखने के कारण ही स्वराज्य कायम हो सका है। आप दोनों का यह आदर वह सुंदर सुझाव देने के लिए ही किया जा रहा है। उन्होंने आप की यात्रा का सारा प्रबंध कर दिया है और उनका आग्रह है कि आप दोनों राज्याभिषेक देखने अवश्य पधारें।

अचानक किसान को बरसों पहले की वह घटना याद हो आई। उसने पूछा—महाराज तक वह छोटी-सी बात कैसे पहुंची?

सरदार ने उत्तर दिया— उस दिन वे ही तो आपके मेहमान थे। □

मामू की उंगलियां

बादशाह औरंगज़ेब के मामा शाइस्ता खां को पूना पर कब्जा किए एक वर्ष से अधिक समय बीत चुका था। बादशाह ने उन्हें छत्रपति शिवाजी को और उनके राज्य को नष्ट करने का आदेश दिया था। जोधपुर नरेश राजा जसवंत सिंह और उनके साथ लगभग एक लाख सेना उनकी सहायता के लिए तैनात की गई थी। मुगलों ने बीजापुर के सुलतान के साथ भी शिवाजी के विरुद्ध संयुक्त मोर्चा बनाने के लिए सांठगांठ की हुई थी । कुछ लड़ाई भी हुई थी पर अब के बीजापुर के सुलतान के साथ शिवाजी की संधि हो गई थी।

लेकिन मुगल अब भी पूना में जमकर बैठे हुए थे और वहां से हटने का नाम नहीं लेते थे। मराठों की छोटी सेना के लिए उनके साथ सीधी टक्कर लेना संभव न था। छिटपुट हमलों से काम बन नहीं रहा था । कई लड़ाइयों में मुगलों की हार भी हो चुकी थी पर इससे कोई अंतर नहीं पड़ा था। मुगलों ने शिवाजी की पूरी नाकाबंदी कर रखी थी। अब वे हमला करने की तैयारी कर रहे थे। मराठे जानते थे कि अगर मुगलों को जल्दी न हटाया गया तो बाद में उनका मुकाबला करना असंभव हो जाएगा। पर प्रश्न था कि यह काम किया कैसे जाए?

मराठों की राजधानी तब रायगढ़ में थी। वहां इसी समस्या पर विचार हो रहा था। छत्रपति शिवाजी और उनके सभी प्रमुख सरदार, घुड़सवार सेना के सेनापति नेताजी पालकर, पैदल सेना के सेनापति येसाजी कंक, सूबेदार तानाजी मालुसरे, उनके भाई सूर्याजी, जेधे मोरो जी पंत आदि सभी सरदार और राजनीतिज्ञ एकत्र थे। पर कोई उपाय सूझ नहीं रहा था। कुछ करना ही होगा यह सभी मानते थे, पर क्या किया जाए और कैसे किया जाए इसकी स्पष्ट योजना कोई बना नहीं सका था। छत्रपति शिवाजी सबकी बात चुपचाप सुन रहे थे। उनकी ओर देखने से इतना अवश्य पता चलता था।

़कि वे गहरे सोच में हैं। कान अवश्य बातों की ओर लगे हैं पर दिमाग कहीं दूर किसी उलझन में फंसा हुआ है।

एकाएक उनके चेहरे का भाव बदल गया। तनी हुई भौहें सीधी हो गईं। चेहरे पर चिंता की जगह आत्मविश्वास की भावना झलक उठी। सरनौबत नेताजी पालकर मुगलों के अत्याचार के कारण पूना के आस-पास की जनता की दुर्दशा का वर्णन कर रहे थे। उनकी बात काटकर शिवाजी बोल पड़े– किसी बड़े साहस के बिना तो मुगलों को हटाना संभव नहीं मालूम पड़ता। मेरे मन में एक बात आई है। आप उसे सुन लीजिए। समस्या को सुलझाने का यही एक रास्ता मुझे नजर आता है।

सभी सरदार अपने नेता और राजा की बात ध्यान से सुनने लगे। जब शिवाजी अपनी बात समझाने लगे तो सरदार हैरान रह गए। इतना बड़ा साहस! और यदि कहीं गड़बड़ हो गई तो? कुछ लोगों ने यह कहा भी कि महाराज, इसमें बड़ा खतरा है।



मराठों की राजधानी तब रायगढ़ थी। वहां इसी समस्या पर विचार हो रहा था।

शिवाजी ने उत्तर दिया—यह मैं मानता हूं कि इसमें भारी खतरा है, पर यह काम बगैर खतरा उठाए हो ही नहीं सकता। आप सब कोई रास्ता सुझा नहीं सकते तो मेरी एक ही योजना है। अगर सब लोग अपना-अपना काम सावधानी से करें तो मां भवानी के आशीर्वाद से अंत में हमें सफलता जरूर मिलेगी।

पर फिर भी सरदारों को संतोष न हुआ। उनका कहना था कि ऐसे खतरनाक काम में छत्रपति शिवाजी को आगे नहीं रहना चाहिए। अगर कोई गड़बड़ी हो गई तो परिणाम भयंकर होगा। पर शिवाजी के पास इसका भी उत्तर था। उन्होंने कहा— इतनी साहसी योजना में पीछे रहना कायरता होगी। शाइस्ता खां का डेरा मेरे मकान लाल महल में है और वहां का चप्पा-चप्पा मेरा देखा हुआ है। मेरे बिना यह काम पूरा न हो सकेगा।

यह कहकर उन्होंने किसे क्या काम करना है, यह समझाना आरंभ किया। अब बहस की गुंजाइश ही न थी। अब तो शांत चित्त और धैर्य से समझ-बूझकर आज्ञा पालन का समय था।

पूना के आसपास मीलों तक मुगल छावनी फैली हुई थी। राजपूत, मुसलमान, पठान, मराठे सभी इस विशाल सेना में थे। राजा जसवंत सिंह के अलावा कई बड़े हिंदू और मुसलमान सरदार शाइस्ता खां की सेना में अपनी-अपनी टुकड़ियां लेकर आए थे। इनमें कई मराठा सरदार भी थे। पूना के आसपास के प्रदेश से मराठों की सत्ता नष्ट हो चुकी थी। लोग घरबार छोड़कर भाग गए थे। केवल बीस किलोमीटर दूर सिंहगढ़ अभी भी मराठों के कब्जे में था और मुगलों की इस विशाल सेना की उपेक्षा कर गर्व से मराठों का भगवा झंडा लहरा रहा था।

चैत्र का महीना था। हिंदू नवरात्रि का समारोह मना रहे थे। हिजरी काल गणना के अनुसार रमज़ान का महीना था। मुसलमानों के रोजे चल रहे थे। 6 अप्रैल 1663 का दिन था। सूर्यास्त के बाद मुसलमान अधिकारी और सैनिक रोजा खोल रहे थे। दूसरे ही दिन रामनवमी थी। हिंदू राम-जन्म के व्रत की तैयारी कर रहे थे। मुगलों की एक अग्रिम चौकी के पास से कुछ लोग गुजरने लगे।

सिपाहियों ने उन्हें टोका—कौन हो तुम? कहां जा रहे हो?

—अपने ही आदमी हैं भाई! गश्त पर गए थे।

—ठीक है, जाओ।

कई चौकियों पर इस ढंग की घटना हुई । कहीं कोई कारण बता दिया तो कहीं कुछ और । लगभग एक लाख की सेना में कौन सभी सिपाहियों को पहचान सकता था? इस प्रकार दो-दो चार-चार के गुटों में कई सौ सिपाहियों के साथ छत्रपति शिवाजी मुगल छावनी में दाखिल हो गए। यहां तक तो सफलता मिली थी, पर आगे का काम और भी कठिन था।

अब तक रात काफी बीत चुकी थी। छावनी में सन्नाटा छा गया था। शिवाजी और उनके साथी चुपचाप बढ़े जा रहे थे। वहीं पर शाइस्ता खां का डेरा था। यह शिवाजी का अपना मकान था। उनका बचपन यहीं बीता था। उसमें डेरा डालकर शाइस्ता खां ने मानो उनका उपहास किया था। शिवाजी और उनके साथी लाल महल तक बिना किसी रोक-टोक के पहुंच गए। इतनी विशाल सेना के पहरे और चौकियों को लांघता हुआ शत्रु यहां तक भला कैसे पहुंच सकता है, इस विश्वास के कारण वहां पूछताछ कम ही हुई ।



—कौन हो तुम? कहां जा रहे हो?
—अपने ही आदमी हैं भाई! गश्त पर गए थे।

अब तक आधी रात बीत चुकी थी। शिवाजी के अनुचरों ने लाल महल में सेंध लगाना आरंभ किया। एक के बाद एक पत्थर ढीले होकर गिरने लगे और दीवार में छेद हो गया। छत्रपति शिवाजी और उनके थोड़े-से साथी चुपचाप इस छेद में से रसोईघर में घुस गए। किसी को पता भी न चला कि प्रधान सेनापति के आवास में शत्रु घुस गए हैं।

रोजे का नियम है कि भोजन सूर्योदय के पहले या सूर्यास्त के बाद ही किया जा सकता है, दिन में नहीं। शाइस्ता खां के बावर्ची प्रातःकाल के भोजन के लिए खाना पका रहे थे। बाकी सभी जगह सन्नाटा था। बावर्ची निरीह थे पर उनकी उपेक्षा की जाए तो वे शोर मचा सकते थे। उनका कांटा दूर करना ही था। बेचारे बावर्चियों को पता न चला कि कहां से कौन आया और उसने क्या किया।

बावर्ची अपने काम में लगे हुए थे। उन्हें बचाकर मराठे शाइस्ता खां के कमरे की ओर बढ़ चले। अब तक कुछ लोगों को आहट हो चुकी थी। पर उन्होंने सोचा बावर्ची खाना पका रहे हैं और उन्हीं के बरतन -भांडों की खटपट है। अधिकतर मुगल पहरेदार तो सोए ही पड़े थे जो जग भी रहे थे उनको भी अपनी आंखों पर विश्वास न हो रहा था। मराठे भला यहां? पर अब बहुत देर हो चुकी थी। पहरेदार तलवार उठाएं, इससे पहले ही मराठे उनका काम तमाम कर देते थे। सारी बाधाओं को दूर कर अब छत्रपति शिवाजी और उनके साथी लाल महल के उस हिस्से में पहुंच गए थे जहां शाइस्ता खां और उनके परिवार के लोग सोए हुए थे। अचानक एक दासी जग पड़ी। इतने सशस्त्र मराठों को देखकर उसने शोर मचाया—दौड़ो! दौड़ो!! दुश्मन घुस आया है। उनकी चीख से शाइस्ता खां की नींद खुल गई। मराठे अब तक उनके कमरे में पहुंच चुके थे। शाइस्ता खां ने धनुष-बाण उठाकर मराठों से लड़ने की तैयारी की। कमरे में एक ही छोटा-सा दीप जल रहा था। उनके परिवार की किसी महिला ने बड़ी सूझबूझ से यह दीप बुझा दिया। वह समझ गई थी— इतने अधिक लोगों से लड़ने का क्या परिणाम हो सकता है।

अब कमरे में अंधेरा छा गया था। कौन मित्र है, कौन शत्रु, कुछ पता न चलता था। शिवाजी शाइस्ता खां की खोज में थे। शाइस्ता खां कमरे में है, यह तो उन्हें पता था पर कहां है यह मालूम न था। मराठे अंधकार में ही तलवार चला रहे थे। अचानक शिवाजी को शाइस्ता खां नजर आ गए। सिंह जैसे शिकार पर झपट्टा मारे उसी प्रकार वे उनकी ओर दौड़ पड़े। तलवार का वार शाइस्ता खां की हथेली पर पड़ा और तीन

उंगलियां कट गईं। पर शाइस्ता खां पास की खिड़की से बाहर कूद कर जान बचाने में सफल हो गए।

लाल महल में हंगामा मच गया था। शत्रु कहां है, संख्या में कितने हैं, कैसे आए, इसका किसी को पता न था। मार काट मच रही थी। बाहर मुगल छावनी में भी तहलका मच गया था। लाल महल में गड़बड़ हो गई है, यह सबको पता था पर दरवाजे अंदर से बंद थे; केवल चीखने-चिल्लाने की आवाज बाहर आ रही थी। अंदर मराठे लाल महल को खून से रंग रहे थे। उनका खयाल था कि शाइस्ता खां मारे गए हैं। पर असलियत का पता उन्हें दूसरे दिन ही लग पाया। मराठों के हाथों शाइस्ता खां का पुत्र अबुल फतेह खां, एक दामाद, एक अधिकारी, परिवार के चालीस लोग और बारह स्त्रियां मारी गईं। खां के दो पुत्र आहत हुए। इतने अर्से में भारी संख्या में मुगल सेना बाहर एकत्र हो गई थी। पर मुगल सैनिकों की आंख बचाकर शिवाजी और उनके अनुयायी वहां से भाग खड़े हुए। घोड़े पहले से ही तैयार थे। उन पर सवार हो वे सिंहगढ़ की ओर सरपट दौड़ चले।

मुगलों के सूबेदार, बादशाह के मामा और एक लाख फौज के सेनापति शाइस्ता खां की छावनी पर मारा गया यह छापा, एक आश्चर्यजनक घटना थी। मुगलों की शान धूल में मिल गई थी। दूसरे दिन सवेरे मुगल छावनी में मातम छाया हुआ था। शाइस्ता खां ने तत्काल पूना छोड़ दिया और वे औरंगाबाद चले गए। मुगलों को अब तक यह पता चल गया था कि शिवाजी सिंहगढ़ गए हैं। उन्होंने सिंहगढ़ पर हमला करने का प्रयास किया, पर किले की तोपों के आगे उनकी एक न चली।

जब बादशाह औरंगज़ेब को इस घटना का पता चला तो उन्हें बड़ा क्रोध आया। कहां तो मामू ने शिवाजी को नेस्तनाबूद करने का वायदा किया था और कहां मामू अपनी उंगलियां ही खो बैठे। मुगल साम्राज्य की शान फीकी पड़ गई। अब तक किसी सूबेदार की ऐसी नाक नहीं कटी थी। उन्होंने फौरन शाइस्ता खां की बदली बंगाल में कर दी।

शाइस्ता खां ने बादशाह से कहा—मैं अब भी शिवाजी को जीत सकता हूं। पर उनका आग्रह बेकार रहा। उन्हें दक्षिण छोड़ना ही पड़ा और इसी के साथ मुगलों का शिवाजी के विरुद्ध यह अभियान भी प्रायः समाप्त हो गया। □

पावन खिंड का वीर

कोल्हापुर से कुछ दूर एक किला है विशालगढ़ । किले तक पहुंचने के लिए एक छोटा दर्रा पार करना पड़ता है। रास्ता संकरा और कठिन है। यह दर्रा पावन खिंड कहा जाता है। नाम पूरी तरह सार्थक है क्योंकि आज से लगभग तीन सौ साल पहले इस दर्रे को बाजीप्रभु ने अपने रक्त से सींच कर पावन कर दिया था। पावन खिंड का हर पत्थर आज भी उनकी शूरता और आत्मबलिदान का साक्षी है।

सन् 1660 में मराठा राज्य पर बहुत बड़ी विपत्ति आई थी। मुगल बादशाह औरगंज़ेब और बीजापुर के सुलतान दोनों ने छत्रपति शिवाजी के स्वराज्य को कुचलने के लिए एक दूसरे से संधि कर ली थी। बादशाह के मामा शाइस्ता खां उस समय दक्षिण के सूबेदार थे। बादशाह के आदेश के अनुसार वे एक लाख की सेना लेकर महाराष्ट्र पहुंच गए। उनकी सेना ने पूना के आस-पास का सारा प्रदेश रौंद डाला।

दूसरी ओर बीजापुर की चालीस हजार सेना दक्षिण महाराष्ट्र पर टूट पड़ी। इन दोनों सेनाओं का उद्देश्य था स्वराज्य के इस छोटे-से पौधे को बुरी तरह कुचलना कि उसका नामोनिशान बाकी न बचे। इतनी बड़ी फौज से सीधे टक्कर लेना आत्मघात होता। राज्य बचाने का एक ही उपाय था। इन सेनाओं को उलझाए रखना, छिटपुट हमलों से उन्हें तंग करना और जब वे थक जाएं तो उन्हें खदेड़ देना। शाइस्ता खां चाकण, रायगढ़ आदि के किलों को सर करने के पीछे पड़ा तो बीजापुर के सेनापति सिद्दी जौहर ने कोल्हापुर के पास पन्हाला दुर्ग पर घेरा डाला। छत्रपति शिवाजी इसी दुर्ग में थे। यह किला उनके राज्य की दक्षिणी सीमा के कुछ ही अंदर था। वे चाहते थे कि बीजापुर की सेना यहीं फंसी रहे तो अच्छा है। पूना के पास का प्रदेश तो मुगल उजाड़ ही रहे थे, अगर दक्षिण से बीजापुर की सेना भी अंदर आ जाती तो सारा राज्य ही तहस-नहस हो जाता। इसलिए मुकाबला करने के लिए शिवाजी पन्हाला दुर्ग में चले गए। बीजापुर की फौज ने किले पर घेरा डाल दिया।

बीजापुर का सेनापति चाहता था कि पन्हाला पर कब्जा कर शिवाजी को कैदी बना ले, जिससे स्वराज्य की जड़ ही नष्ट हो जाए। मराठे किले की रक्षा के लिए प्राणपण से जुटे थे। कई बार मराठों के प्रधान सेनापति नेताजी पालकर ने घेरा तोड़कर पन्हाला का मार्ग खोलने का प्रयत्न किया पर वे असफल रहे। उधर किले के अंदर छत्रपति शिवाजी की हालत पिंजरे में बंद शेर जैसी हो रही थी। मुगल और बीजापुर की



शिवाजी की हालत पिंजरे में बंद शेर जैसी हो रही थी।
मुगल और बीजापुर की फौजों ने त्राहि-त्राहि मचा दी थी।

फौजों ने त्राहि-त्राहि मचा दी थी। लोग घबड़ा गए थे। पर शिवाजी बाहर निकले तो कैसे? उनका रास्ता तो सिद्दी जौहर और उसकी सेना ने रोक रखा था। महीनों बाद भी उसकी सतर्कता और चौकसी में कोई कमी नहीं आई थी।

कहावत है कि जो काम शक्ति से नहीं होता वह युक्ति से हो जाता है। शिवाजी ने सिद्दी जौहर के पास संदेश भेजा— मैं स्वयं अपने को और पन्हाला दुर्ग को आपको सौंपने को तैयार हूं।

यह संदेश पाकर सिद्दी और उसकी सेना में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। बरसात आरंभ हो गई थी और पन्हाला अब भी अभेद्य था। चार महीने घेरा डालकर पड़े रहने के कारण सेना ऊब गई थी। जो काम इतने प्रयत्न से साध्य न हो सका, वह अनायास हो रहा था। मराठे भूखे मर रहे हैं, वे दुर्ग सौंप देंगे, इस समाचार से सेना में रंग-रेलियां मनाई जाने लगीं। चौकसी कम हो गई।

छत्रपति शिवाजी इसी की प्रतीक्षा में थे। रात के अंधेरे में घनघोर वर्षा में छः सौ सैनिकों के साथ वे किले के बाहर निकले। जासूसों ने उन्हें पहले ही बता दिया था कि किस तरफ घेरा ढीला है। सफलता की खुशी में बेहोश शत्रु की चौकियों को पार कर, मराठा सैनिकों की यह टुकड़ी जंगल के रास्ते विशालगढ़ के दुर्ग की ओर चल पड़ी। विशालगढ़ पर भी बीजापुर की सेना ने मोर्चे लगा दिए थे। 64 किलोमीटर का यह अंतर पार करना और विशालगढ़ के नीचे मोर्चे लगा कर बैठी शत्रु की फौज से जूझते हुए किले में पहुंचना असंभव लगता था। पर इसे संभव बनाना ही था।

शिवाजी और उनके सैनिक पन्हाला की आखिरी चौकी पार कर रहे थे कि बीजापुर की सेना को पता लग गया। फिर क्या था? पीछा शुरू हो गया। रात के अंधेरे और घनघोर वर्षा में मराठे जंगल और कीचड़ पार करते पैदल विशालगढ़ की ओर बढ़ चले और उनके पीछे लग गए सिद्दी जौहर के दामाद मसूद और उसके घुड़सवार। एकाएक सिद्दी मसूद को कुछ मराठे एक पालकी ले जाते हुए दिखाई पड़े। पालकी कीमती थी और उसमें बैठा हुआ आदमी बहुमूल्य वस्त्र पहने था। मसूद ने उससे पूछा—तुम्हारा नाम

—शिवाजी।

शिकार हाथ लग गया है, यह जानकर मसूद फूला न समाया। पर उसकी खुशा निराशा में बदल गई क्योंकि छावनी जाकर पता चला कि यह व्यक्ति छत्रपति शिवाजी नहीं, शिवाजी नाम का नाई है। मराठों ने उसे चकमा देने के लिए ही यह चाल चली थी।

इतने समय में छत्रपति शिवाजी काफी आगे निकल गए, पर विशालगढ़ अब भी बहुत दूर था। बीजापुर की सेना भी इतनी आसानी से कहां मानने वाली थी? सिद्दी मसूद फिर निकल पड़ा और दो हजार घुड़सवार लेकर उनका पीछा करने लगा। छत्रपति शिवाजी और उनके सैनिक पूरी शक्ति से विशालगढ़ की ओर बढ़ रहे थे पर उनका पीछा करने वाली सेना उससे भी अधिक तेजी से आगे बढ़ रही थी।

कुछ देर बाद जब शिवाजी गजापुर के पास पहुंचे तो विशालगढ़ 6 किलोमीटर दूर था। किले को सर करने के लिए आई बीजापुर की फौज के मोर्चे पार कर वहां तक पहुंचना बड़ा कठिन था पर पीछे से आती सेना का संकट उससे कहीं अधिक भयानक था। कैसे इन दोनों से निपटा जा सकेगा?

बाजीप्रभु देशपाण्डे शिवाजी के साथ आई टुकड़ी के प्रधान थे। उन्होंने शिवाजी से कहा— महाराज, यह दर्रा बचाव की लड़ाई के लिए बहुत अच्छा है। मैं आधे सैनिकों को लेकर शत्रु को रोके रखता हूं। आप बाकी सैनिकों को लेकर किले की ओर बढ़िए। किले पर पहुंचकर जब तक आप पांच तोपें दाग कर मुझे यह संकेत नहीं कर देते कि आप सकुशल पहुंच गए तब तक दुश्मन आगे नहीं बढ़ सकता।

शिवाजी को यह पंसद न आया पर बाजीप्रभु ने कहा— महाराज ! आप रहेंगे तो स्वराज्य रहेगा। आपका बच निकलना आवश्यक है। मेरी ओर से आप निश्चिंत रहें। जब तक हम जीवित हैं, दुश्मन का एक भी सिपाही आगे नहीं बढ़ सकता।

इस आग्रह तथा उचित-सलाह को छत्रपति शिवाजी टाल न सके। वे विशालगढ़ की ओर बीजापुर की सेना से जूझने के लिए चल पड़े। अब उन्हें पीछा करने वाली सेना की चिंता न थी। यह जिम्मेदारी तो बाजीप्रभु ने ले ली थी।

उधर बाजीप्रभु के सैनिक गजापुर के दर्रे में मसूद का रास्ता रोक कर डट गए। तीन सौ सिपाही दो-तीन हजार की सेना के मार्ग में इस दृढ़ निश्चय के साथ अड़ गए कि जान दे देंगे पर जाने न देंगे। दोपहर से कुछ पहले मसूद ने हमला बोल दिया।

असफल ! फिर असफल! बार-बार असफल! समय बीतता जा रहा था। मराठे अपने रक्त से, अपने प्राण से अपने राज्य और राजा के लिए एक-एक क्षण खरीद रहे थे। उनके शरीर पावन खिंड में थे, मन छत्रपति शिवाजी के साथ और कान तोपों की आवाज सुनने के लिए आतुर। वे कट रहे थे पर फिर भी रास्ता रोके हुए थे।

यह लड़ाई लगभग पांच घंटे तक चलती रही। उधर छत्रपति शिवाजी विशाल गढ़ के बाहर तैनात बीजापुर की फौज से लड़ते हुए किले की ओर बढ़ रहे थे। शाम को लगभग 6 बजे वे किले पर पहुंच गए। पन्हाला छोड़ने के इक्कीस घंटे बाद वे चैन की सांस ले पाए। किले पर पहुंचते ही उन्होंने तोपें दागने का आदेश दिया जिससे बाजीप्रभु देशपाण्डे समझ जाएं कि वे (महाराज) सकुशल पहुंच गए हैं। और वह भी निकल आएं।

धड़ड़ड़———धड़ाम .. एक के बाद दूसरी तोप ने बाजी को संकेत देना आरंभ किया। तब तक बाजीप्रभु देशपाण्डे के तीन सौ सैनिकों में से थोड़े ही बाकी बचे थे।



तोपों का संदेश मिलते ही उन्होंने कहा— मेरा कर्तव्य पूरा हो गया। महाराज सकुशल पहुंच गए।

वाजीप्रभु स्वयं भयंकर रूप से जख्मी हो गए थे पर फिर भी उन्होंने और उनके सैनिकों ने मुगलों को रोक रखा था।

वाजीप्रभु ने तोपों की गड़गड़ाहट सुनी पर अव बहुत देर हो गई थी। उनकी देह पर बीसों जख्म लग चुके थे। तोपों का संदेश मिलते ही उन्होंने कहा— मेरा कर्त्तव्य पूरा हो गया। महाराज सकुशल पहुंच गए। थोड़ी ही देर बाद उन्होंने दम तोड़ दिया। उनके बलिदान से गजापुर का दर्रा पावन हुआ और उसका नाम पावन खिंड पड़ा।

छत्रपति शिवाजी का पन्हाला से निकल कर विशालगढ़ पहुंचना, बीजापुर की फौज के लिए गहरा धक्का था। उनकी चार महीने की मेहनत थोड़ी-सी लापरवाही से बेकार हुई। बीजापुर के सुलतान और सिद्दी जौहर के बीच इस बात पर मनमुटाव हो गया।

जो काम एक बड़ी लड़ाई से सफल होता, वह मराठा सेनापतियों की युक्ति से सिद्ध हो गया। यह तरकीब बाजीप्रभु और उनके बहादुर सिपाहियों के त्याग और बलिदान के कारण सफल हुई। □

गढ़ मिला पर सिंह चला गया

पूजा समाप्त कर छत्रपति शिवाजी की मां जीजाबाई सूर्य को अर्घ्य देने के लिए रायगढ़ में अपने कक्ष के बाहर निकलीं कि अनायास उनके पैर ठिठक गए। बालरवि की किरणों से सह्याद्रि के शिखर चमक रहे थे। सर्दी के दिन थे, समय बड़ा सुहावना था। अचानक उनकी नजर दूर क्षितिज पर दिखाई पड़ रहे एक किले पर जाकर अटक गई। वह प्रचंड किला आस-पास के भूभाग पर अपनी प्रभुता जताते हुए इस शान से खड़ा था जैसे कोई प्रतापी राजा अपने दरबारियों के बीच शान से खड़ा हो। उस पर लहराते हुए मुगलों के चांद और तारे कें चिन्ह वाले हरे झंडे को देखकर जीजाबाई ने लंबी सांस ली। उनके पीछे खड़ी दासी ने उन्हें एकाएक उदास देख कर पूछा—मां! क्या हुआ?

—कुछ नहीं। महाराज को सूचित कर दो कि जैसे भी हो, वे आज मुझसे अवश्य मिल लें।

—पर महाराज तो कल ही आपकी आज्ञा लेकर प्रतापगढ़ गए हैं।

—मुझे मालूम है। किलेदार से कहकर तुम उनके पास अभी हरकारा भिजवा दो। यह कहकर वे पूजा में लग गईं।

जिस किले पर फहराते हुए मुगल झंडे को देखकर जीजाबाई उदास हो गई थीं, उसका नाम कोण्डाणा था। कुछ वर्ष पहले शिवाजी को बाध्य होकर मुगलों से संधि करनी पड़ी थी और सत्ताईस बड़े और छोटे किले उन्हें सौंप देने पड़े थे। इनमें से अधिकतर किले तो उन्होंने फिर जीत लिए थे लेकिन कोण्डाणा अब भी मुगलों के कब्जे में था। उसको जीतना टेढ़ी खीर थी। किला इस ढंग से बना था कि वह महीनों घेरे का मुकाबला कर सके। लंबा घेरा डालने के लिए बड़ी सेना चाहिए और इस बीच मुगल बाहर से फौज लाकर घेरा तोड़ सकते थे। पर इससे भी बड़ा खतरा यह था

कि कोण्डाणा की भौगोलिक स्थिति ऐसी थी कि उसको अपना मुख्य केंद्र बनाकर मुगल किसी भी समय मराठों पर हमला बोल सकते थे और मराठा राज्य को नष्ट कर सकते थे। मुगल इस बात को जानते थे और इस कारण उन्होंने किले पर कई हजार चुने हुए सिपाही रख छोड़े थे और उसकी रक्षा का पूरा प्रबंध कर रखा था। कोण्डाणा पर मुगलों का कब्जा वास्तव में सरदर्द बन गया था। उस पर कब्जा करना आवश्यक था पर कब्जा कैसे किया जाए समझ में नहीं आ रहा था।

उस दिन शाम को जब छत्रपति शिवाजी जीजाबाई से मिलने आए, तो उन्होंने मां से इन्हीं कठिनाइयों की चर्चा की। पर मां ने कहा—जब तक कोण्डाणा तुम्हारे कब्जे में नहीं आता तब तक बाकी किले लेना बेकार है क्योंकि मुगल जब चाहें तब उन्हें ले सकते हैं।



जब तक कोण्डाणा तुम्हारे कब्जे में नहीं आता तब तक बाकी किले लेना बेकार है।

—मैं जानता हूं, मां! पर क्या करूं कोण्डाणा अभेद्य है।

—कुछ भी करो लेकिन कोण्डाणा जीतना ही होगा। सवेरे मैं जब सूर्य को अर्घ्य देने बाहर निकलती हूं, तो उस पर मुगलों का झंडा देखकर मेरा कलेजा फट जाता है।

मां-बेटे की बातचीत चल ही रही थी कि दासी ने सूचना दी, सूबेदार तानाजी मालुसरे आए हैं। तानाजी शिवाजी के बालसखा थे और स्वराज्य-प्राप्ति के प्रयत्न में उनके दाहिने हाथ। जीजाबाई का भी उन पर पुत्रवत् प्रेम था। उन्होंने दासी से कहा—उन्हें अंदर ले आओ।

तानाजी से कुशल क्षेम पूछने के बाद जीजाबाई ने पूछा— तानाजी बहुत दिन बाद दिखाई पड़े, कहो कैसे आना हुआ?

—मां! रायबा की शादी कर रहा हूं। आपको निमंत्रण देने आया था। उसके बाद प्रतापगढ़ जाकर महाराज को न्योता देने वाला था। पर सौभाग्य से वे यहीं मिल गए। पंद्रह दिन बाद शादी है, आप दोनों को अवश्य आना पड़ेगा। पर महाराज! आप यहां कैसे?

—अच्छा, लड़के की शादी कर रहे हो! खुशी की बात है। मैं तो क्या आ पाऊंगी पर शिवा अवश्य आएगा। मैने उसे किसी खास काम से बुलाया था, इसलिए अनायास यहां तुमसे मुलाकात हो गई।

—खास काम से! क्या बात हो गई?

—कोई बात नहीं। तुम लड़के की शादी कर लो तो बताऊंगी।

—वाह, कोई बात कैसे नहीं, मां! जब मैं आया तो मैंने देखा कि आप दोनों के चेहरे पर परेशानी है। महाराज तो बिलकुल चुप हैं। मेरे रहते आपको चिंता हो, यह मैं कैसे बरदाश्त कर सकता हूं?

—समस्या पुरानी है तानाजी और हम लोग उस पर कई वार बातचीत भी कर चुके है। कोण्डाणा जब तक शत्रु के पास है तब तक हम कभी चैन की नींद नहीं ले सकते। मां का विचार है कि उस पर जितनी जल्दी हो सके, विजय पानी ही होगी—शिवाजी ने कहा।

—तो फिर कठिनाई क्या है?

— यह काम असंभव- सा है और उसे दो ही आदमी कर सकते हैं—तुम या मैं। तुम लड़के की शादी में फंसे हो इसलिए अब मुझे ही यह काम करना पड़ेगा।

– वाह महाराज! मेरे रहते आप अपनी जान खतरे में डालें, यह कैसे हो सकता है। हम लोग किस लिए हैं?

–लेकिन रायबा की शादी जो है?

–ठीक है, शादी में तो अभी पंद्रह दिन शेष हैं। पहले कोण्डाणा पर विजय प्राप्त की जाए और फिर रायबा की शादी करेंगे।

–मुझे तो यह उचित नहीं लगता।

–महाराज ठीक कह रहे हैं, तानाजी! पहले तुम लड़के की शादी कर लो फिर कोण्डाणा विजय की बात सोचना– जीजाबाई ने कहा।

–नहीं , मां! इसमें देर करना ठीक नहीं। कोण्डाणा में मुगल और अधिक सेना ला रहे हैं, उससे पहले ही यह काम हो जाना चाहिए। रही रायबा की शादी की बात तो आपने ही मुझे सिखाया है कि व्यक्ति से बड़ा परिवार का हित और सबसे बड़ा राष्ट्र का हित होता है। आप मुझे आशीर्वाद दीजिए कि मैं कोण्डाणा जीत लूं। अब तो रायबा की शादी में ही हम सब मिलेंगे।

तानाजी ने अगले आठ-दस दिन छिपे-छिपे फौज इक्ट्ठी करने में लगाए। उनके ज़ासूस भेष बदलकर कई बार कोण्डाणा गए और वहां की रक्षा व्यवस्था के बारे में जानकारी इकट्ठी कर ले आए। तानाजी ने शिवाजी को सूचना भिजवाई कि माघ बदी नवमी की रात को किले पर हमला होगा और अगर किला फतह हो गया तो वे कोण्डाणा पर रायगढ़ की तरफ घास की बड़ी ढेरी में आग लगा देंगे, जिससे महाराज को विजय की सूचना मिले।

हमले की योजना को सफल बनाना बड़े साहस का काम था और तानाजी जैसे नरवीर के ही मस्तिष्क की उपज हो सकती थी जो उसे सफल बना सके क्योंकि किले पर घेरा डाल कर या सीधा हमला कर कब्जा करना असंभव था। बुद्धिकौशल, साहस, वीरता और शत्रु को भौचक्का कर ही कोण्डाणा सर किया जा सकता था। कोण्डाणा के एक तरफ पहाड़ बिलकुल सीधा है। और उस ओर से किसी के लिए भी ऊपर चढ़ना असंभव लगता था।

भारत में गोह नामक एक जंतु होता है जिसे महाराष्ट्र में घोरपड़ कहते हैं। यह खड़ी से खड़ी चढ़ाई पर सीधा चढ़ता है। इसकी दूसरी विशेषता यह है कि ऊपर पहुंचकर यह अपने नख इस मजबूती से जमा लेता है कि उसकी सहायता से आदमी भी ऊपर चढ़ सकता है। तानाजी , उनका भाई सूर्याजी, अस्सी साल का बूढ़ा शेलार मामा और कुछ थोड़े-से सिपाही रात के अंधेरे का लाभ उठाकर घोरपड़ की पूंछ में बंधे रस्सों की सहायता से कोण्डाणा दुर्ग पर पहुंच गए। वे जिस ओर से चढ़े थे उस तरफ पहाड़ बिलकुल सीधा खड़ा है और उस ओर से कोई ऊपर आ सकता है, इसका मुगलों को स्वप्न में भी ध्यान न था। तानाजी चाहते थे कि लड़ते-भिड़ते वे किले का मुख्य द्वार खोल दें, जिससे मराठों की बाकी सेना किले के अंदर प्रवेश कर विजय प्राप्त कर सके।

आरंभ में तानाजी को आशातीत सफलता मिली। वे और उनके साथी किले पर पहुंचने में और एक-दो चौकियों पर कब्जा करने में सफल हो गए, लेकिन तब तक किले की मुगल और राजपूत सेना चौकन्नी हो गई थी। अंधेरे में कौन मित्र है और कौन शत्रु, इसका पता नहीं चलता था। मराठे मुट्ठी भर ही थे। मुगलों का किलेदार



दोनों भूखे शेर की तरह एक-दूसरे पर टूट पड़े।

उदयभानु जी-जान से मराठों का सफाया कर देने की कोशिश कर रहा था। धीरे-धीरे मराठे कमजोर पड़ने लगे। इसी बीच तानाजी और उदयभानु का सामना हो गया। दोनों भूखे शेर की तरह एक-दूसरे पर टूट पड़े। अचानक तानाजी की ढाल टूट गई लेकिन फिर भी वे हाथ में दुपट्टा लपेटकर लड़ते रहे क्योंकि दूसरी ढाल लेने का मौका न था। पर तलवार की मार को दुपट्टा कैसे बचा सकता था। उदयभानु के एक वार ने उनके तलवार वाले हाथ के दो टुकड़े कर दिए और जब तक वे दूसरे हाथ में तलवार लें तब तक उसने उनका सिर गर्दन से अलग कर दिया।

तानाजी की मृत्यु से मराठों का रहा-सहा हौसला भी पस्त हो गया और वे भागने लगे। उनका इरादा था कि वे जिस ओर से किले में आए थे उस तरफ पहुंच जाएं और घोरपड़ों में बंधे रस्सों की सहायता से निकल भागें। पर यह क्या? रस्से- तो किसी ने काट दिए थे। यह काम तानाजी के भाई सूर्याजी का था।

उसने भागते हुए मराठों को ललकारा—अरे कायरो! उधर तुम्हारा बाप मरा पड़ा है और तुम उसकी लाश को दुश्मन के कब्जे में छोड़कर भागना चाहते हो? रस्से मैंने काट दिए हैं, तुम वापस नहीं जा सकते। दो ही रास्ते हैं या तो वीरों की तरह लड़ते-लड़ते मरो या दुश्मन के सामने आत्मसमर्पण कर कुत्ते की मौत मरो।

इस ललकार ने मराठों में नया जीवन फूंक दिया और वे किले के सिंहद्वार की ओर वापस लौट पड़े। वहां पर अद्भुत दृश्य था। प्रतापी भांजे की मृत्यु से मर्माहत अस्सी साल का बूढ़ा शेलार मामा उदयभानु से जूझ रहा था। उदयभानु जवान और शक्तिशाली था। शेलार मामा अनुभवी योद्धा था और बदले की भावना से पागल होकर लड़ रहा था। देखते ही देखते उसने उदयभानु का काम तमाम कर दिया। तब तक मराठे सिंहद्वार पर भी कब्ज़ा कर चुके थे। दरवाजा खुलने की देर थी कि बाहर प्रतीक्षा करती मराठों की सेना 'हर हर महादेव' के नारे के साथ अंदर घुस पड़ी। मुगल सेना की तब तक हिम्मत पस्त हो चुकी थी। वह इस नए आघात को बरदाश्त न कर सकी। कोण्डाणा पर मराठों का अधिकार हो गया।

इधर रायगढ़ पर छत्रपति शिवाजी बार-बार कोण्डाणा की ओर देखते थे। उतनी दूर से, कोण्डाणा पर कुछ गड़बड़ हो गई है इतना तो पता चलता था, पर वे जानना चाहते थे कि प्रयास सफल हुआ या नहीं। एकाएक उन्होंने देखा कि कोण्डाणा पर

एक बड़ी आग भभक उठी है। वे इतंजार न कर सके और फौरन सेना की एक टुकड़ी लेकर कोण्डाणा की ओर चल पड़े।

जब सूरज उगा तो उन्होंने देखा कि कोण्डाणा पर भगवा झंडा लहरा रहा है। किले के पास पहुंचने पर उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि इस बड़ी जीत के बाद भी, मराठों में कोई उत्साह नहीं। इसका कारण उन्हें किले पर पहुंचते ही मालूम हो गया। अपने बालसखा और अनुचर के शव को देखकर उनकी आंखों में आंसू छलक आए। वे बोल पड़े—गढ़ मिला पर सिंह चला गया।

उनकी इस उक्ति के कारण उसी दिन से कोण्डाणा का नाम सिंहगढ़ पड़ा। पूना के पास इस किले पर तानाजी की समाधि बनी हुई है। देश की स्थल , जल और वायुसेना के अधिकारियों को प्रशिक्षित करने वाली नेशनल डिफेंस अकादमी इसी के पास स्थापित की गई है। इन युवकों को सिंहगढ़ तानाजी की याद दिलाता है और त्याग तथा बलिदान की प्रेरणा देता है। □

प्रतापराव का आत्मयज्ञ

छत्रपति शिवाजी के एक सेनापति थे प्रतापराव गूजर। उनकी उपाधि थी सरनौबत। प्रतापराव बड़े वीर थे और छत्रपति शिवाजी की उन पर बड़ी कृपा थी। लेकिन छत्रपति शिवाजी अपने किसी भी सरदार की लापरवाही बिलकुल सहन नहीं करते थे। एक बार प्रतापराव से बहुत बड़ी गलती हो गई जिसका प्रायश्चित उन्हें अपने प्राण देकर करना पड़ा।

बीजापुर का सरदार बहलोल खां विशाल सेना लेकर मराठा राज्य को कुचलने के लिए आगे बढ़ रहा था। छत्रपति शिवाजी ने अपने सेनापति प्रतापराव को उसका मुकाबला करने की आज्ञा दी। प्रतापराव अपनी सेना लेकर इतनी तेजी से आगे बढ़े कि बहलोल खां को उनके आने का कुछ भी पता न चला। मराठा सेना ने चुपचाप बीजापुर की सेना की चारों ओर से नाकाबंदी कर दी । लड़ाई लड़े बिना ही बीजापुर की विशाल सेना घिर गई। पर इससे भी बड़ी बात यह हुई कि सेना जिस नदी से पानी लेती थी, उससे सेना का संबंध मराठों ने तोड़ दिया। गर्मी के दिन थे और पानी के बिना वह तड़पने लगी। बीजापुर की सेना निराश हो गई और उसे मराठों से दया की याचना करनी पड़ी।

बहलोल खां ने प्रतापराव के पास संदेश भेजा– पानी के बिना हम मर रहे हैं। दया कीजिए। अगर आप हमें निकल जाने देंगे तो मैं वायदा करता हूं कि मराठों के विरुद्ध कभी तलवार न उठाऊंगा।

प्रतापराव को दया आ गई। उन्होंने यह भी सोचा कि बहलोल खां को पर्याप्त सबक मिल चुका है। उन्होंने बहलोल खां की बात मान ली। बीजापुर की विशाल सेना मराठों की छोटी सेना के सामने सिर नीचा कर निकल गई। प्रतापराव अपनी इस विजय पर फूले न समाए। उन्होंने छत्रपति शिवाजी को अपनी सफलता की सूचना दी।

पर परिणाम उलटा हुआ। जब छत्रपति शिवाजी को पता चला कि प्रतापराव ने बहलोल खां जैसे बड़े सरदार को बंदी नहीं बनाया और निकल जाने दिया तो वे बड़े नाराज हुए। उन्होंने प्रतापराव से पूछा—यह सुलह किसकी आज्ञा से की गई? बहलोल खां को बंदी क्यों नहीं बनाया गया? क्या तुम्हें मालूम नहीं कि बीजापुर के सरदार संकट में पड़ते ही लंबे-लंबे वायदे करते हैं और उतनी ही जल्दी उन्हें तोड़ते भी हैं? बहलोल



यह सुलह किसकी आज्ञा से की गई? बहलोल खां को बंदी क्यों नहीं बनाया गया?

खां को छोड़ना सांप को दूध पिलाना है। वह फिर हमला करेगा। उसका मुकाबला करने में जो मराठे काम आएंगे उनकी मृत्यु के लिए कौन जिम्मेदार होगा?

प्रतापराव पर वज्रपात हुआ। कहां तो उन्हें उम्मीद थी कि उन्हें शाबाशी मिलेगी और पड़ी उलटी डांट। उनकी रही-सही आशा भी शीघ्र नष्ट हो गई। क्योंकि बहलोल खां ने शीघ्र ही भारी फौज इकट्ठी कर ली और मराठा राज्य पर हमले करने आरंभ कर दिए।

इस समय छत्रपति शिवाजी के राज्याभिषेक की तैयारियां हो रही थीं। सदियों के बाद भारत में एक स्वतंत्र राजा विधिवत् गद्दी पर बैठने वाला था। मराठा राज्य के सारे सरदार समारोह के लिए एकत्र हुए थे। केवल सेनापति प्रतापराव की प्रतीक्षा थी। समारोह में उनका काम महत्वपूर्ण था। उन्हें ही वह सुवर्ण कलश पकड़ना था जिसके जल से छत्रपति का राज्याभिषेक पूरा होता।

इतने में समाचार मिला कि बहलोल खां ने फिर आक्रमण कर दिया है। बहलोल खां का नाम सुनते ही मानो छत्रपति शिवाजी को आग लग गई। इसी को प्रतापराव ने छोड़ा था और फिर यह उपद्रव मचा रहा है, उन्होंने प्रतापराव को पत्र भेजा—बार-बार यह खां आता है। एक बार ऐसा बंदोबस्त करो कि फिर यह सिर न उठा सके। ऐसा किए बिना मुझे मुंह मत दिखाना।

जब प्रतापराव को यह पत्र मिला तब वह स्वयं इस प्रयत्न में थे कि बहलोल खां को वचनभंग के लिए अच्छा सबक दिया जाए।

एक दिन जब वह अपनी छावनी से काफी दूर थे, तब उन्हें पता चला कि बहलोल खां फौज के साथ आगे बढ़ रहा है। प्रतापराव की फौज बहुत पीछे थी। उनके साथ केवल छः सिपाही थे। लेकिन उनको तो अपनी गलती सुधारनी थी। छत्रपति शिवाजी के पत्र ने उन्हें मर्माहत कर दिया था। केवल छः सवारों के साथ उन्होंने बहलोल खां पर हमला कर दिया। बदले की भावना ने उनको इतना उत्तेजित कर दिया था कि शत्रु की संख्या कितनी अधिक है, इसका भी उन्हें विचार न रहा।

चौबीस फरवरी सन् 1674 को यह अद्भुत युद्ध हुआ। केवल सात सवारों ने हजारों की सेना पर धावा बोल दिया और त्राहि-त्राहि मचा दी। पर केवल सात आदमी कितनी देर टिक सकते थे? वे कट मरे पर उन्होंने जितने लोगों का सफाया किया उसे देख बहलोल खां भी आश्चर्यचकित रह गया।

छत्रपति शिवाजी को जब प्रतापराव के बलिदान का समाचार मिला तो वे स्तब्ध रह गए। उनका उद्देश्य केवल प्रतापराव को डांटना-भर था। यह वे थोड़े ही चाहते थे कि प्रतापराव इस प्रकार आत्मघात कर लें?

प्रतापराव की सेना को जब अपने सेनापति के आत्मबलिदान का समाचार मिला तो वह बदले के लिए मानो पागल हो उठी। प्रतापराव की जगह उसके नायब आनंदराव ने ली। आनंदराव ने बहलोल खां की जागीर पर हमला किया और उसे लूट लिया। तीन हजार बैलों पर लूटी हुई संपति लेकर जब मराठा सेना वापस लौट रही थी तब बहलोल खां ने उसे रोकने का प्रयास किया। बंकापुर के पास हुई इस लड़ाई में मराठों ने बहलोल खां की सेना को बुरी तरह हराया। बहलोल खां स्वयं जान बचाकर भाग निकला लेकिन उसकी सेना लगभग नष्ट कर दी गई। □



जब मराठा सेना वापस लौट रही थी तब बहलोल खां ने उसे रोकने का प्रयास किया।

कर्तव्य

दिलेरखां के सेनापतित्व में मुगलों की विशाल सेना ने महाराष्ट्र पर आक्रमण किया था। उसका उद्देश्य था–छत्रपति शिवाजी और उनके राज्य को सदा के लिए कुचल देना। मुगलों की सेना संख्या में अधिक और अच्छे शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित तो थी ही, उसको सबसे अधिक मदद छत्रपति शिवाजी के बड़े पुत्र युवराज संभाजी से मिली थी। पिता के अनुशासन से रुष्ट होकर संभाजी मुगलों से जा मिले थे और अब पिता को पराजित करने में शत्रु की सहायता कर रहे थे।

मराठे इस आक्रमण का जान लड़ाकर मुकाबला कर रहे थे। पर संख्या बल और घर का भेदी दोनों की सम्मिलित शक्ति भारी पड़ रही थी। एक के बाद एक कई किले शिवाजी के हाथ से निकल गए। और अब मुगलों की सेना ने भूपालगढ़ पर हमला कर दिया । किला घिर चुका था और विजय के मद में चूर मुगल सेना उस पर जल्दी से जल्दी कब्जा करना चाहती थी। भूपालगढ़ भौगोलिक दृष्टि से बड़े महत्व का था और इस पर विजय प्राप्त करना मराठा राज्य को कुचलने के लिए आवश्यक था।

छत्रपति शिवाजी भी भूपालगढ़ के महत्व को भली-भांति समझते थे। उन्होंने भूपालगढ़ के बचाव की पूरी व्यवस्था की थी। दीवारों की मरम्मत की गई थी और उन्हें ऊंचा उठाया गया था। आस-पास की जिन पहाड़ियों से किले पर तोपों की मार की जा सकती थी उनकी नाकाबंदी की गई थी। दीवारों पर अच्छी तोपें लगा दी गई थीं। अंदर मराठा सेना की चुनी हुई टुकड़ियां तैनात थीं। हथियार, गोला-बारूद, अनाज और पीने के पानी का पूरा प्रबंध था। मराठों का विश्वास था कि भूपालगढ़ अजेय है, क्योंकि भूपालगढ़ का किलेदार फिरंगोजी नरसाला था जिसके बारे में प्रसिद्ध था कि वह प्राण भले ही दे दे पर पीछे नहीं हटेगा। कई लड़ाइयों में वह अपनी वीरता, दृढ़ता और युद्ध कौशल दिखा चुका था। भूपालगढ़ पर हमले की आशंका होते ही उसे वहां भेज दिया गया था और उसने मुगल सेना के दांत खट्टे करने का बीड़ा उठाया था।

सारे मराठा राज्य की आंखें फिरंगोजी और भूपालगढ़ पर लगी थीं। सब के मन में यह भावना थी कि फिरंगोजी की वीरता और भूपालगढ़ की मोर्चेबंदी पर विजय पाना असंभव है। इस कारण जब यह समाचार मिला कि फिरंगोजी ने मामूली लड़ाई के बाद ही भूपालगढ़ दिलेरखां को सौंप दिया तो एकाएक किसी को विश्वास नहीं हुआ। मानो इस खबर की पुष्टि करने के लिए ही फिरंगोजी ख़ुद छत्रपति शिवाजी के दरबार में उपस्थित हुए। किला सौंपते समय उन्होंने दिलेरखां से यह शर्त मनवा ली थी कि उन्हें और उनकी सेना को हथियार सहित निकल जाने दिया जाए।

प्रतापगढ़ में छत्रपति शिवाजी अपने मंत्रियों के साथ भूपालगढ़ के पतन के बारे में चर्चा कर रहे थे। फिरंगोजी ऐसे वीर ने सहज ही में किला नहीं छोड़ा होगा, यह सभी मानते थे। पर कारण क्या हो सकता है, इसके बारे में अनुमान लगाए जा रहे थे। इतने में सेवक ने खबर दी कि भूपालगढ़ के किलेदार आए हैं। शिवाजी ने आदेश दिया कि फौरन पेश किया जाए।

फिरंगोजी दरबार में आए और छत्रपति शिवाजी का अभिवादन कर सिर नीचा किए, हाथ बांधे खड़े रहे। उन्हें देखते ही शिवाजी के सामने भूपालगढ़ की पराजय मानो साकार हो उठी। चेहरे पर निराशा, क्रोध और दुःख की लहरें दौड़ गईं। फिर भी अपने को संभाल कर उन्होंने कहा—फिरंगोजी! मैंने तुमको खास तौर पर भूपालगढ़ की किलेदारी पर भेजा था।

—जी, महाराज—फिरंगोजी ने नीचे सिर किए उत्तर दिया।

—मुझे तुमसे बड़ी उम्मीद थी। मैं समझता था कि भूपालगढ़ की किलेदारी के लिए तुमसे अच्छा व्यक्ति नहीं मिल सकता। दिलेरखां तो क्या साक्षात काल भी तुमसे भूपालगढ़ नहीं छीन सकता था। फिर यह पराजय कैसे हुई?

—मैंने किला मुगलों को सौंप दिया। फिरंगोजी ने बगैर सिर उठाए ही उत्तर दिया।

—क्यों सौंप दिया? क्या गोला-बारूद कम था या पीने के पानी में कुछ गड़बड़ी थी?

—जी नहीं। फौज ठीक थी। गोला-बारूद, पानी, खाना सबका प्रबंध ठीक था।

—फिर भूपालगढ़ दुश्मन को क्यों सौंपा गया?

—मजबूरी थी।

—क्या मजबूरी थी?

फिरंगोजी ने इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया। वह सिर झुकाए खड़ा था।

उसकी चुप्पी से शिवाजी के संयम का बांध टूट गया। वे कहने लगे— जानते हो, इस प्रकार किला दुश्मन के हवाले करने के लिए क्या दंड है?

—जी हां।

—क्या दंड है?

—मौत की सजा। और मेरी प्रार्थना है कि आप मुझे मृत्युदंड दें। फिरंगोजी ने पहली बार सिर उठाकर उत्तर दिया।

उसके इस उत्तर से दरबार में सनसनी फैल गई । स्वयं छत्रपति शिवाजी भी आश्चर्यचकित रह गए। कुछ क्षण रुक कर वह बोले—फिरंगोजी! तुम जानते हो कि मैं तुम्हें कितना चाहता हूं। मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि तुम भूपालगढ़—जैसा किला बिना लड़े ही दुश्मन को सौंप दोगे। मैं जानना चाहता हूं कि तुमने ऐसा क्यों किया?

शिवाजी की बात से फिरंगोजी की आंखों में आंसू आ गए। वह शिवाजी के पैरों पर गिर पड़े और कहने लगे— महाराज! मैं अपराधी हूं। मुझे दंड दीजिए। मैं और कुछ नहीं कहना चाहता।

शिवाजी ने उन्हें उठाया और उनकी पीठ पर हाथ रखकर बोले—ठीक है। दंड तो तुमको मिलना ही चाहिए। पर मैं यह जानना चाहता हूं कि तुमने दुर्ग क्यों सौंप दिया?

—मेरी विवशता थी।

—क्या विवशता थी?

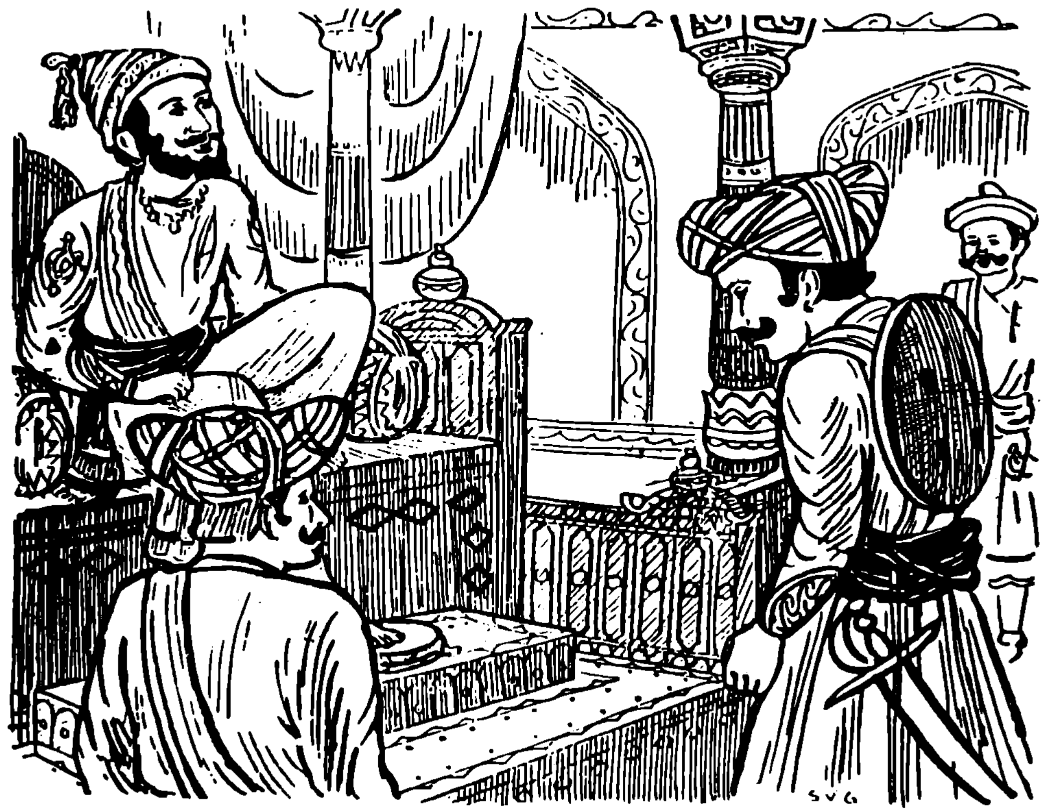
—यह आप मुझसे न पूछें, महाराज!

—नहीं, यह तो तुम्हें बताना ही पड़ेगा। तुम्हारे जैसा बहादुर जब दुश्मन को विवश होकर किला सौंप देता है तब उसका कारण जानना आवश्यक हो जाता है—शिवाजी ने फिरंगोजी से कहा

—आपको दुःख होगा।

—मेरे दुःख-सुख की परवाह मत करो। मेरा हुक्म है कि तुम क्यों विवश हो गए, यह तुम मुझे बताओ।

—जो आज्ञा! भूपालगढ़ लंबे घेरे का मुकाबला करने के लिए पूरी तरह तैयार था।



तुम्हारे जैसा वीर जब दुश्मन को विवश होकर किला सौंप देता है तब उसका कारण जानना आवश्यक हो जाता है— शिवाजी ने फिरंगोजी से कहा।

दिलेरखां ने किला घेर लिया और दो-तीन बार उसने छिट-पुट हमले भी किए। उसका उद्देश्य हमारी तैयारी का अंदाज लगाना था। मैं भी जानता था कि वह बड़े हमले की तैयारी कर रहा है। हम सब मुकाबले के लिए तैयार थे। जब उसकी सेना ने चढ़ाई की तब मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि पहली पंक्ति में एक बड़े हाथी पर दिलेरखां और युवराज संभाजी सवार थे। मैं चाहता था कि पहला गोला मैं खुद चलाऊं और

दिलेरखां को अपना शिकार बनाऊं। मैं अगर गोला दागता तो मुझे पूरा विश्वास था कि दिलेरखां का काम तमाम कर देता। लेकिन, लेकिन-------।

—लेकिन क्या? फिरंगोजी! तुमने गोला क्यों नहीं दागा?

उस हाथी पर युवराज संभाजी थे। मराठों के युवराज, भावी छत्रपति पर मैं कैसे गोला चलाता? मेरी आंखों के आगे आपका चेहरा और उनकी पत्नी येसूबाई साहब की मूर्ति घूम गई। सिर चकरा गया और हाथ कांपने लगे। दिलेरखां मेरा असमंजस भांप गया और उसने मेरी दुविधा से पूरा लाभ उठाया। आप ही बताइए महाराज, ऐसी परिस्थिति में मैं क्या करता?

—क्या करता? फिरंगोजी, तुम्हारा कर्तव्य बिलकुल स्पष्ट था। मराठा राज्य ने तुम्हें भूपालगढ़ की सुरक्षा की जिम्मेदारी सौंपी थी और यह जिम्मेदारी निभाना तुम्हारा सबसे प्रथम कर्तव्य था।

—पर मराठों के छत्रपति और उनके युवराज के प्रति राजभक्ति भी तो मेरा कर्तव्य है।

—अवश्य! तभी तक, जब तक राजा और युवराज राज्य के हितों के अनुरूप कार्य कर रहे हों। युवराज संभाजी दुश्मन का साथ दे रहे हैं, इस कारण उनके प्रति भक्ति या निष्ठा का कोई सवाल ही नहीं उठता। राज्य, किसी भी व्यक्ति से, राजा से भी, बड़ा होता है और राज्य का हित देखना हर नागरिक का कर्तव्य है।

—तो आपके विचार में मुझे युवराज पर गोला दागना चाहिए था?

—हां। शिवाजी ने कहा। फिर अपने निजी सचिव की ओर मुड़कर उन्होंने आदेश दिया— आज ही सभी किलेदारों को आज्ञापत्र भेजो कि युवराज संभाजी गद्दार हो गए हैं और मुगलों का साथ दे रहे हैं। उनके साथ वही बर्ताव करना होगा जो शत्रु के साथ करना चाहिए। उसे मेरा बेटा समझ कर अगर कोई किलेदार ऐसा न करेगा तो उसे कठोर दंड दिया जाएगा। □

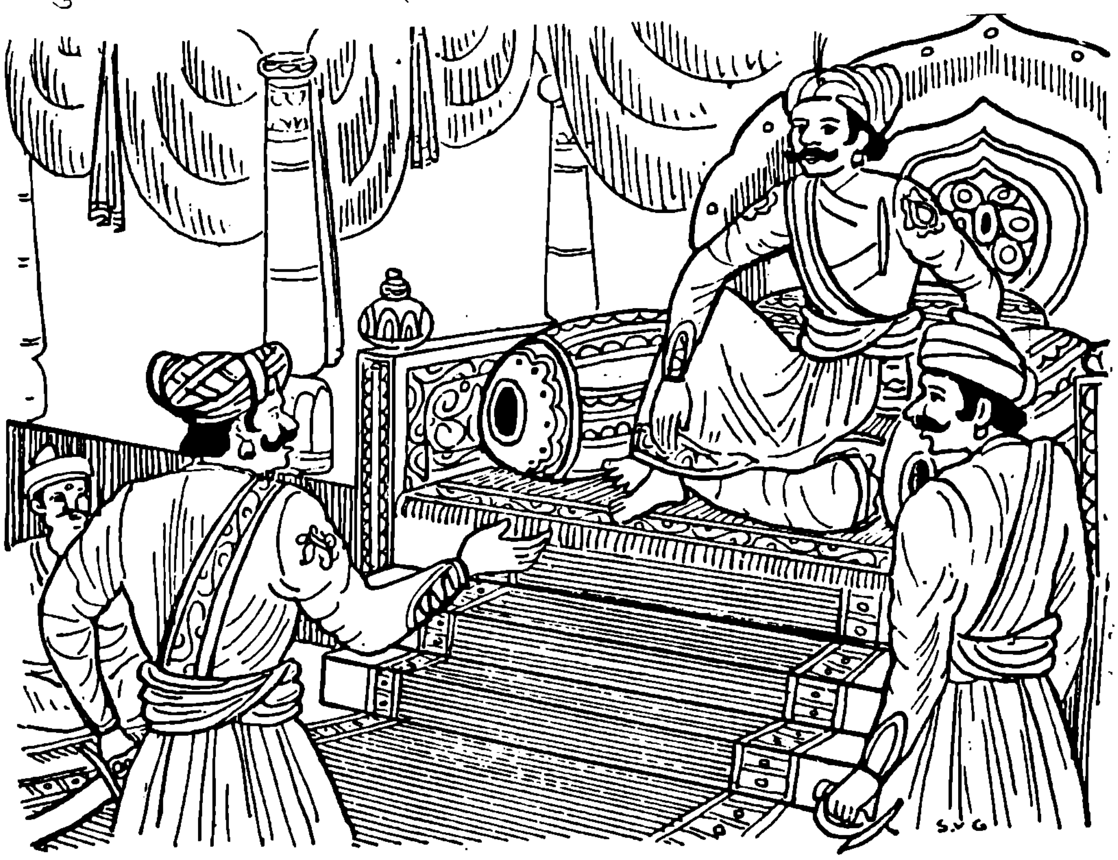
घमंड से विनाश

सत्रहवीं सदी के अंतिम वर्ष मराठों के लिए बड़े संकट और गौरव के थे। छत्रपति शिवाजी की मृत्यु के बाद बादशाह औरंगज़ेब विशाल सेना लेकर मराठा राज्य को मलियामेट करने दक्षिण गए थे। छत्रपति शिवाजी के पुत्र संभाजी पिता की तरह वीर तो थे, लेकिन उनमें पिता-जैसी दूरदर्शिता और अपने ध्येय के लिए कष्ट सहने की क्षमता न थी। वे स्वभाव से उद्दंड और क्रोधी थे। मुगलों की विशाल सेना का मुकाबला संगठित होकर और दृढ़ निश्चय से ही किया जा सकता था। ऐसा वे न कर सके। बादशाह औरंगज़ेब की सेना ने सारा महाराष्ट्र जीत लिया। छत्रपति संभाजी पकड़े गए। औरगंज़ेब ने कठोर यातना देकर उन्हें मरवा डाला। मराठों की राजधानी रायगढ़ मुगलों ने जीत ली। संभाजी की रानी येसूबाई और युवराज बालक साहू बंदी बना लिए गए। छत्रपति शिवाजी के दूसरे पुत्र राजाराम ने राज की बागडोर सम्हाली। महाराष्ट्र में रहने में खतरा था। वे लगभग सोलह सौ किलोमीटर दूर मद्रास के पास जिजी के किले में चले गए और वहां से राजकाज का संचालन करने लगे।

औरंगज़ेब को आशा थी कि संभाजी की हत्या के बाद और सारा महाराष्ट्र जीतने के बाद मराठे निराश होकर घुटने टेक देंगे। पर परिणाम उलटा ही हुआ। जिस निर्ममता से छत्रपति संभाजी की हत्या की गई थी उससे लोगों में बदला लेने और मुगलों का मुकाबला करने की इच्छा बलवती हो गई। जनता में यह भावना जागृत हुई कि उनके राजा की हत्या उनका अपमान है और इसका प्रतिशोध लेना ही होगा। मराठों की सेना बहुत छोटी थी। मुगल सेना विशाल थी और उसके पास तोपें, हाथी, घोड़े आदि सभी कुछ था। उससे सीधी टक्कर लेना तो एक तरह से आत्मघात ही होता। इसलिए मराठों ने लड़ाई का नया तरीका अपनाया। उनकी सेना मुगलों की रसद तोड़ती, मुगलों को जब स्वप्न में भी कल्पना न होती तो अचानक छापा मारती और जहां मुगल कमजोर

होते वहां उन पर जोरदार हमला कर उन्हें हरा देती। मुगल जब तक उनका मुकाबला करने के लिए एकत्र होते तब तक मराठे कहीं दूर निकल गए होते।

इस समय दो मराठा सरदारों ने बड़ा नाम कमाया। ये थे सेनापति सन्ताजी घोरपड़े और धनाजी जाधव। उन्होंने छापे मार-मारकर मुगलों से त्राहि बुलवा दी। सन्ताजी ने तो एक बार बादशाह औरंगज़ेब की छावनी पर भी छापा मारा। बादशाह के खेमे के चारों ओर विशाल सेना थी। पर फिर भी सन्ताजी और उनके सिपाही बादशाह के खेमे तक पहुंच गए। उन्होंने खेमे के रस्से काट दिए। खेमा गिर गया और अंदर के लोग दबकर मर गए। औरंगज़ेब सौभाग्य से उस खेमे में नहीं थे इसी कारण वे बच गए। सन्ताजी ने बादशाह के खेमे पर लगे हुए सोने के कलश तथा अन्य बहुमूल्य सामान छत्रपति राजाराम के पास भेंट स्वरूप भेज दिया। इसी तरह धनाजी से मुगल इतना डरते थे कि जब घोड़े पानी न पीते थे तो सिपाही उनसे पूछते थे— क्या बात है? पानी में तुम्हें धनाजी तो नहीं दिखाई दे रहा?



आप राजा तो मेरे कारण बने बैठे हैं। मैं जिसे चाहूं राजा बना सकता हूं।

सन्ताजी और धनाजी की इस जोड़ी ने मुगल सेना में आतंक मचा रखा था। इन दोनों ने मिलकर कर्नाटक में मुगलों के तीन बड़े सरदारों को बुरी तरह हराया। इनमें से एक को तो अपनी जान बचाने के लिए बीस लाख रुपये का दंड और तीस लाख रुपये मूल्य का अपना साज-सामान अर्पित करना पड़ा।

पर सन्ताजी और धनाजी की यह जोड़ी कायम न रह सकी। इसका कारण था सन्ताजी का स्वभाव। उनमें क्रोध और घमंड बहुत था। छोटी-सी गलती के लिए वे अपने अनुयायी को प्राणदंड तक दे देते थे। उन्हें यह घमंड भी हो गया था कि मराठा राज्य उनकी तलवार के बल पर ही टिका हुआ है। इसके विपरीत धनाजी स्वभाव से शांत और मृदुभाषी थे।



सतारा के पास एक झरने में सन्ताजी नहा रहे थे। शस्त्र पास नहीं थे। ऐसे समय उनके ऊपर कुछ हत्यारे टूट पड़े।

सन्ताजी का घमंड इतना बढ़ गया कि वे जिंजी गए और वहां उन्होंने छत्रपति राजाराम से भी उद्दंडतापूर्ण व्यवहार किया। उन्होंने यहां तक कह दिया— आप राजा तो मेरे कारण बने बैठे हैं। मैं जिसे चाहूं राजा बना सकता हूं।

राजाराम स्वभाव से बड़े शांत थे। सन्ताजी की योग्यता वे अच्छी तरह जानते थे। लेकिन उनका घमंड और क्रूरता उन्हें अच्छी न लगती थी। और अब तो दरबार में सेनापति ने राजा का अपमान ही कर दिया था। उन्होंने सोचा, ऐसा अपमान सहना राजा को शोभा नहीं देता, इसलिए छत्रपति ने सन्ताजी को सेनापति के पद से हटा दिया और उनकी जगह दी धनाजी जाधव को।

पर अब भी सन्ताजी की आंख न खुली। घमंड का पर्दा जो उस पर पड़ा था। उनके जैसा वीर पुरुष इतनी आसानी से सेनापति का पद कैसे छोड़ सकता था? अब तक सन्ताजी और धनाजी मिलकर मुगलों से लड़ते थे। अब उनमें आपस में लड़ाई शुरू हो गई। छत्रपति राजाराम ने धनाजी को आज्ञा दी कि वे सन्ताजी को बंदी बनाएं। आरंभ में सन्ताजी का पलड़ा भारी रहा और उन्होंने धनाजी को हराया भी। पर 1697 में सतारा के पास हुई लड़ाई में सन्ताजी बुरी तरह पराजित हुए।

मुगलों ने सन्ताजी को जीवित या मृत पकड़ने के लिए पहले ही भारी इनाम घोषित कर रखा था। पर वे जब तक सेनापति पद पर थे तब तक उन्हें पकड़ना टेढ़ी खीर थी। सन्ताजी के अपने अधिकारी और सिपाही भी उनकी क्रूरता और घमंड के कारण उनसे नाराज थे पर जब तक वे सेनापति थे तब तक वे क्या कर सकते थे? जब उन्हें पता चला कि छत्रपति राजाराम ने सन्ताजी को सेनापति पद से हटा दिया है तो वे उनका साथ छोड़ने लगे। धीरे-धीरे सिपाहियों की संख्या इतनी कम हो गई कि सन्ताजी को जान बचाने के लिए भागना पड़ा।

मराठों का यह प्रतापी सेनापति जिसके नाम से पहले बादशाह औरंगज़ेब और सारी मुगल सेना थर्राती थी, अब एक भगोड़ा था। उसे अपनी जान के लाले पड़े हुए थे। मुगल उसको पकड़ना चाहते थे, मराठे उसे बंदी बनाना चाहते थे और ऐसे भी लोग थे जो भाई-भतीजों पर किए अपमान और अन्याय का उनसे बदला लेना चाहते थे। उनके बहुत थोड़े अनुयायी ही अब उनके साथ थे। क्या था और अब क्या हो गया!

सन् 1697 के जून मास में सतारा के पास एक झरने में सन्ताजी नहा रहे थे! शस्त्र पास नहीं थे। ऐसे समय उनके ऊपर कुछ हत्यारे टूट पड़े। इनका अगुआ एक ऐसा व्यक्ति था जिसके साले को सन्ताजी ने हाथी से कुचलवा कर मरवाया था। उन्होंने सन्ताजी की हत्या कर दी और सिर काटकर औरंगज़ेब के पास भिजवा दिया। औरंगज़ेब ने सन्ताजी को मारने के लिए घोषित इनाम और जागीर दी।

इस प्रकार मराठों के इस वीर सेनापति का अंत हुआ। धनाजी जाधव मराठा सेना का नेतृत्व करते रहे तथा औरंगज़ेब और मुगल सेना के प्रयत्नों को विफल करते रहे। औरंगज़ेब के जीवन के अंतिम पच्चीस वर्ष महाराष्ट्र विजय के प्रयत्नों में बीते। वे विशाल सेना लेकर आए थे पर जीवन के अंतिम वर्षों में वे अपनी आंखों के सामने अपने प्रयास को विफल होते देख रहे थे। मराठों के दृढ़ निश्चय और लड़ाई के तरीके के कारण मुगलों की जीत, हार में बदल गई। कहां तो वे महाराष्ट्र विजय के मंसूबे बना कर आए थे और अब वे केवल इतना चाहने लगे कि किसी तरह उत्तर भारत लौट जाएं। इसका बहुत कुछ श्रेय सन्ताजी और धनाजी को है। औरंगज़ेब की मृत्यु के बाद जब मुगलों ने संभाजी के पुत्र छत्रपति साहू को मुक्त किया तो उनको गद्दी पर स्थापित करने में भी धनाजी जाधव अगुआ थे। □

आप चलें, मैं आता हूं

दिल्ली के लालकिले में दरबार समाप्त हुआ और पेशवा बालाजी विश्वनाथ बाहर निकले। वे बहुत खुश थे। यह स्वाभाविक भी था। औरंगज़ेब ने जिस मराठा राज्य को मिटाने के लिए जी तोड़ प्रयत्न किए थे, आज बादशाह फर्रुखसियर ने बाध्य होकर उसी के प्रधानमंत्री पेशवा को सारे राज्य में चौथ और सरदेशमुखी वसूल करने का अधिकार दिया था। आज दरबार में पेशवा को यही सनदें मिली थीं। यह मराठों की शक्ति और मुगलों की कमजोरी का स्पष्ट प्रमाण था। मुगल साम्राज्य मराठों की तलवार का संरक्षण चाहता था। इन सनदों के बल पर सारे मुगल साम्राज्य में मराठे कर वसूल करने वाले थे। अगर इनको प्राप्त कर पेशवा प्रसन्न थे तो इसमें आश्चर्य की क्या बात थी?

सनदें लेकर पेशवा पालकी में बैठने ही जा रहे थे कि बालाजी महादेव भानु फडणवीस उनके पास आए और कान में कहने लगे— मैं आपसे कुछ बातें करना चाहता हूं।

—पड़ाव पर पहुंचकर कर लेंगे— पेशवा ने कहा।

—नहीं, उससे पहले ही करनी है।

पेशवा सोच में पड़ गए। कुछ सोचकर उन्होंने कहा—मैं रास्ते में गौरीशंकर के मंदिर में पूजा के लिए जाऊंगा। वहीं बातें करेंगे।

पेशवा की पालकी चली। साथ में कुछ मराठा सैनिक थे और थे मुगल सेना के लगभग एक हजार सिपाही, जिन पर पेशवा की रक्षा का भार सौंपा गया था। गौरीशंकर मंदिर में पेशवा के स्वागत का शानदार प्रबंध किया गया था। दिल्ली के हिंदू नागरिक पेशवा के सम्मान को अपना सम्मान समझते थे। मंदिर के बाहर जनता पेशवा की जयजयकार के लिए जुटी थी और अंदर दिल्ली के चुने हुए विद्वान उन्हें आशीर्वाद देने



—मैं रास्ते में गौरीशंकर के मंदिर में पूजा के लिए जाऊंगा। वहीं बातें करेंगे।

के लिए खड़े थे। पेशवा मंदिर में जाने लगे तो बालाजी भानु ने उनसे कहा—आप नहाकर पीताम्बर पहन कर गौरीशंकर की पूजा करें तो अच्छा हो।

—पेशवा कुछ कहना चाहते थे लेकिन भानु के चेहरे का भाव देखकर चुप हो गए।

पेशवा के नहाने का प्रबंध हो रहा था। मंदिर के आंगन में एक ओर कपड़े बदलने और नहाने के लिए छोलदारी खड़ी कर दी गई थी। इस छोलदारी में जब पेशवा घुसे तो साथ में केवल भानु और उनका नौकर था। पेशवा ने भानु से पूछा—क्या कहना चाहते थे?

—आज आपके साथ दगा होगा।

—मतलब?

—बादशाह ने मराठों को सनदें दी हैं जिससे निज़ामुल्मुल्क और आसफखान नाराज हैं। उन्होंने निश्चय किया है कि जब आप वापस लौटें तो किसी सूनी जगह में आपकी पालकी पर हमला किया जाए और सनदें छीन ली जाएं।

—खबर पक्की है?

—*बिलकुल पक्की।*

—मेरे साथ फौज चल रही है।

—मराठे थोड़े से हैं। बाकी फौज तो पड़ाव पर है। मुगल फौज भी अंदर से दुश्मनों के साथ मिली हुई है। हमला होने पर इसमें से कुछ सिपाही तो भाग जाएंगे और बाकी दुश्मन का साथ देंगे।

—फिर तुम्हारी क्या राय है?

—मैं इसी सोच में हूं। मंदिर तक तो ठीक रहा क्योंकि रास्ता शहर के बीच से था। खतरा तो आगे है।

—फिर?



— आप मेरे कपड़े पहन लीजिए। मैं आपकी पोशाक धारण कर लूंगा। आप चलिए, मैं आता हूं।

—आप नहा कर पूजा कर लें। मुझे भी पूजा करनी है। तब तक भगवान कुछ रास्ता दिखा ही देगा।

पेशवा ने पूजा समाप्त की और भानु के साथ वे छोलदारी में वापस आए। उन्होंने भानु से पूछा—कुछ, रास्ता निकला?

—हां।

—क्या?

—आप मुझे यहीं रहने दें। मुगल फौज के अधिकारी को भी आप कहलवा दें कि भानु शहर में किसी काम से रह गया है। फिर आप पालकी में बैठ कर चलें और यह समझा दें कि भानु बाद में आ जाएगा।

—लेकिन इससे सनदें कैसे बचेंगी?

आप समझे नहीं। जो भानु यहां रह जाएगा, वह मैं नहीं आप होंगे। मैं आपकी जगह पालकी में बैठकर जाऊंगा। इसी बीच आप चुपचाप सनदें लेकर पड़ाव पर पहुंच जाइए।

—पर अगर हमला हो तो?

—हमला अवश्य होगा। जान भी जा सकती है, लेकिन सनदें तो सुरक्षित रहेंगी।

—मैं तुम्हें इस खतरे में कैसे छोड़ दूं? दुश्मन का वार तो मुझ पर है।

—वार आप पर नहीं मराठा राज्य पर है। वे सनदें चाहते हैं और पेशवा के कांटे को दूर करना चाहते हैं। बचाव का यही एक रास्ता है।

—मुझे तो यह तरीका पसंद नहीं। अगर तुम्हें कुछ हो जाए तो मैं तुम्हारे बाल-बच्चों को क्या उत्तर दूंगा?

—वैसे तो मुझे कुछ होगा नहीं। यदि हो भी गया तो आप घर में सारी बात कह दीजिएगा, वे समझ जाएंगे। पर अगर इस समय मैं चूक जाऊं तो वे अवश्य कहेंगे कि बापू, तुम्हारे होते हुए पेशवा के साथ दगा हो गया?

पेशवा असमंजस में पड़ गए।

भानु ने कहा– सोचने के लिए समय नहीं है।

–मैं बाहर जाकर इंतजाम करता हूं। आप मेरे कपड़े पहन लीजिए। मैं आपकी पोशाक धारण कर लूंगा। आप चलिए, मैं आता हूं।

बाहर जाकर भानु ने मुगलों के सरदार को कहलवाया कि पेशवा के कुछ आवश्यक काम के लिए मैं थोड़ी देर शहर में ही रहूंगा। पालकी के कहारों से कहा कि पेशवा के सिर में दर्द है वे थोड़ी देर आराम करके चलेंगे। कहारों को आदेश दिया कि पालकी पर पर्दे लगा दें। जिससे पेशवा को धूप न लगे।

थोड़ी देर बाद पेशवा की पालकी चली। मार्ग में पालकी पर हमला हुआ। मुट्ठी भर मराठा सैनिकों ने तो जान की बाजी लगा दी लेकिन उनके साथ की मुगल फौज ने शत्रु का ही साथ दिया। मराठे जब कट गए तभी शत्रु पालकी तक पहुंच पाए। 'पेशवा' ने भी लड़ाई में जी खोल कर हिस्सा लिया लेकिन वे मारे गए। मुगलों ने पेशवा, उनकी पालकी और सभी मराठों के शवों की तलाशी ली, लेकिन उन्हें सनदें नहीं मिली। उन्होंने इसी बात से संतोष कर लिया कि कम से कम पेशवा का कांटा तो दूर हुआ।

पर उनकी यह प्रसन्नता अधिक देर तक टिक न सकी। शीघ्र ही यह प्रकट हो गया कि पेशवा सनदें लेकर सकुशल अपनी छावनी पहुंच गए हैं और उन्होंने इस हमले के लिए जिम्मेदार व्यक्तियों को दंड देने की बादशाह से मांग की है।

बालाजी महादेव भानु ने मराठा राज्य के गौरव की रक्षा के लिए अपने प्राणों की बलि दे दी। इस परंपरा को उनके पोते नाना ने भी कायम रखा। पेशवाई के अंतिम दिनों में नाना फडणवीस मराठा राज्य के आधार स्तंभ बने हुए थे। उनकी बुद्धि का सभी लोहा मानते थे और कहावत थी–जब तक नाना तब तक पूना।

उनकी मृत्यु के बाद ही अंग्रेज पेशवाई को नष्ट कर सके। □

एक बाजी, बाकी सब पाजी

राव पंड़ित प्रधान आप इतने होशियार हैं लेकिन आप भी हमारे चकमे में आ ही गए? हैदराबाद राज्य के संस्थापक वयोवृद्ध निज़ामुल्मुल्क ने पेशवा बाजीराव प्रथम से कहा।

बाजीराव को युवावस्था में ही पेशवा पद प्राप्त हुआ था। निज़ामुल्मुल्क के सामने वे बिलकुल लड़के लगते थे। निज़ाम कहने में तो दक्षिण में मुगल सूबेदार थे पर बादशाह को संदेह था कि वे अपना अलग राज्य स्थापित करना चाहते हैं। इस कारण दिल्ली से उनके विरुद्ध फौज भेजी गई थी। उस संकट का मुकाबला करने के लिए निज़ाम ने छत्रपति साहू से सहायता मांगी थी। मुगलों के पैर दक्षिण भारत में न जमने पाएं यह मराठे भी चाहते थे। मराठों की सेना पेशवा बाजीराव के नेतृत्व में औरंगाबाद आई थी। निज़ाम के निमंत्रण पर बाजीराव केवल कुछ निजी अनुचरों को लेकर उनके यहां दावत पर आए थे। बातचीत बड़े मैत्रीपूर्ण ढंग से हुई थी और अकस्मात् ही निजाम ने यह सवाल पूछा था।

बाजीराव को प्रश्न सुनकर आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा– वह कैसे?

–आपने हमारी दावत मंजूर कर ली यह तो ठीक है। पर केवल कुछ ही नौकरों के साथ आने पर कैसे राजी हो गए?

–क्यों उसमें क्या अड़चन थी?

–राव पंडित प्रधान आप अभी बच्चे हैं। आपकी और हमारी दोस्ती कोई दिली दोस्ती तो है नहीं। हम मुगल फौज के खिलाफ आपकी मदद चाहते हैं और आप हमारी इस मुसीबत से फायदा उठाकर अपना राज्य बढ़ाना चाहते हैं। ऐसी हालत में हमारे कहने से हमारी छावनी में निहत्थे केवल कुछ नौकरों को लेकर आना आपकी बहुत बड़ी गलती है।



आपने हमारी दावत मंजूर कर ली यह तो ठीक है। पर
केवल कुछ ही नौकर के साथ आने पर कैसे राजी हो गए?

—मैं आपकी बात नहीं समझा।

—मैं आपके साथ दगा कर सकता हूं। आपको कैदी बनाकर अगर मैं दिल्ली भेज दूं तो बादशाह मुझ पर बेहद खुश होंगे। इससे बड़ा तोहफा उनके लिए और क्या हो सकता है?

— पर आप ऐसा करेंगे नहीं—बाजीराव ने कहा।

—क्यों?

—इसलिए कि आपके निमंत्रण पर मैं आपका मेहमान बनकर आया हूं। दूसरा कारण यह है कि आपके ख़िलाफ मुगल दरबार में बड़ी साजिशें चल रही हैं। मुझे बंदी बनाकर थोड़े दिन के लिए तो आप पर बादशाह खुश हो जाएंगे पर आपके शत्रु बराबर उनके कान भरते रहेंगे। दोबारा आप पर संकट आएगा तो कौन आपकी मदद करेगा? मैं तो रहूंगा नहीं।

—बात तो आपने ठीक ही कही। लेकिन अगर मैं आपके साथ दगा करूं तो आप कर भी क्या सकते हैं? आपके सिंधिया और होलकर जिनका इतना नाम है और जिन पर आपको इतना नाज है, आपके किस काम आएंगे? इसलिए मैं कह रहा हूं कि आप बहुत भोले हैं, तभी तो आपने हमारा इतना विश्वास किया।

पेशवा के चेहरे पर मुस्कराहट फैल गई। वे कहने लगे—नबाब साहब! मैंने आप पर विश्वास कुछ सोच-समझ कर ही किया है। दगा आप करेंगे नहीं, कर भी नहीं सकते। रही सिंधिया और होलकर की बात। वे भी मेरे ही आस-पास हैं।

—आपके साथ?

—जी हां। कहिए तो आपसे उनकी मुलाकत करा दूं।

—ठीक है।



—नाना साहब! इनसे मिलिए। ये हैं सूबेदार मल्हारराव होलकर और ये रहे सूबेदार राणो जी सिंधिया।

—तो आप अपने किसी नौकर से कहिए कि वह बाहर जाकर मेरे साईस और नौकर को बुला लाए।

कुछ ही क्षणों में पेशवा के दोनों अनुचर अंदर आ गए। उनकी ओर संकेत कर पेशवा ने कहा— नवाब साहब! इनसे मिलिए। ये हैं सूबेदार मल्हारराव होलकर और वे रहे सूबेदार राणो जी सिंधिया।

—इस भेष में?

—जी हां। जब इनको पता चला कि मेरे साथ केवल मेरे निजी सेवक ही आएंगे तो ये अड़ गए कि मेरे साथ अवश्य आएंगे। सरदारों और अधिकारियों को तो आने की छूट न थी इस कारण एक नौकर बनकर आए और दूसरे साईस बन कर।

—इनकी वफादारी देखकर हम बहुत खुश हुए, राव पंडित प्रधान। ऐसे नौकर जिस मालिक के पास हों उसका क्या कहना। निज़ामुल्मुल्क ने कहा। कुछ रुक कर वे फिर बोले—आपके साथ आकर इन्होंने अगर अपनी वफादारी का सबूत दिया तो साथ-साथ इन्होंने बड़ी नासमझी भी दिखाई।

—वह कैसे?.पेशवा ने पूछा।

—अगर आप अकेले आते और आपके साथ धोखा होता तो कम-से-कम सिंधिया और होलकर आपको छुड़ाने की कोशिश तो कर सकते थे। आपके साथ आकर इन्होंने यह रास्ता भी बंद कर दिया है। आप और आपके सिंधिया और होलकर दोनों अगर बंदी हो गए तो मराठा सेना क्या कर सकेगी?

निज़ाम की बात सुनकर भी पेशवा बाजीराव के चेहरे पर मुस्कराहट कायम रही। शांत स्वर में वे बोले—निज़ाम साहब। यह मैं फिर दोहरा दूं कि आप मेरे साथ कपट नहीं करेंगे, कर ही नहीं सकते। आपकी दावत स्वीकार करने से पहले मैंने आपके इरादों के बारे में पूरा पता लगा लिया था। मुझे जब पूरा विश्वास हो गया कि आप कपट कर नहीं सकते तभी मैं आया। आप केवल मेरी परीक्षा ले रहे हैं।

— पर फिर भी अगर मेरी नीयत बदल जाए तो? निज़ामुल्मुल्क ने मुस्करा कर पूछा।

—इसका उत्तर मैं नहीं सूबेदार मल्हारराव देंगे। पेशवा ने कहा। मल्हारराव की ओर मुड़कर वे बोले—बताना, मैंने क्या आदेश दे रखे हैं और उस पर क्या कार्यवाही की तुम दोनों ने?

मल्हारराव ने उत्तर दिया— श्रीमन्त के आदेश सारी सेना को बता दिए गए हैं और उन पर अमल मेरे चलने तक आरंभ भी हो गया था। सारी सेना तैयार बैठी है। पहरे चौकियों पर पूरी चौकसी बरती जाएगी। जब आप छावनी में वापस जाएंगे तभी यह चौकसी ढीली की जाएगी।

—अगर मैं न लौटूं तो?

—आपके चलने के साथ ही चुनी हुई पलटनों ने इस जगह की चारों ओर से नाकाबंदी कर दी है। उनका यह घेरा बहुत बड़ा है पर धीरे-धीरे हमारी सेना उसे छोटा करती जा रही है। सेना को आदेश है कि अगर मध्यरात्रि तक भी हम लोग वापस न लौटे तो अधिकारी पूछताछ करें। अगर उनको निश्चय हो जाए कि दाल में कुछ काला है तो घेरे की पलटनें श्रीमन्त को छुड़ाने के लिए हमला कर दें। बाकी सेना निज़ाम साहब की सेना पर हमला करे।

निज़ामुल्मुल्क आश्चर्य से सुनते रहे। ऐसा उत्तर मिलेगा इसकी उन्हें स्वप्न में भी कल्पना न थी। पेशवा ने कहा—अब मैं आपसे इजाजत चाहूंगा। देर बहुत हो गई है। मैं वापस जाऊंगा तभी सिपाही सो सकेंगे।

पेशवा के खड़े होते ही निज़ामुल्मुल्क भी उठ खड़े हुए। मुस्करा कर उन्होंने कहा—आप का खयाल ठीक था। मैं केवल आपका इम्तिहान ले रहा था। आप उसमें पूरी तरह कामयाब हुए। आपके बारे में जैसा सुना था वैसा ही आपको पाया। आपके जैसा मददगार पाकर मैं बहुत खुश हुआ।

अब तक निज़ामुल्मुल्क और पेशवा बाहर आ चुके थे। पेशवा को गले लगाकर निज़ामुल्मुल्क कहने लगे— एक बाजी, बाकी सब पाजी।

पेशवा ने तत्काल उत्तर दिया—एक निज़ाम, बाकी सब हज्जाम। □

राखो बाजी लाज

पेशवा बाजीराव प्रथम के महल में दोपहर के भोजन की तैयारी थी। पेशवा नहा रहे थे, केवल उनके आने की देर थी। इतने में महल के बाहर एक घुड़सवार उतरा। उसने पहरेदारों से कहा– पेशवा साहब को सूचित कर दो कि राजा छत्रसाल की ओर से जरूरी संदेश लेकर दूत आया है और फौरन मिलना चाहता है।



दूत फौरन पेशवा के पास ले जाया गया। उसने राजा छत्रसाल का पत्र दिया। पत्र क्या था केवल एक दोहा था।

पन्ना के राजा छत्रसाल का मराठों से पुराना संबंध था। शिवाजी ने उन्हें स्वतंत्रता के लिए युद्ध करने की प्रेरणा दी थी। शिवाजी की मृत्यु के बाद जब मराठा राज्य पर संकट आया था तब राजा छत्रसाल उन लोगों में थे जिनकी मराठों के साथ पूरी सहानुभूति थी। उन्होंने स्वतः मुगलों से निरंतर युद्ध कर बुंदेलखंड में अपना राज्य स्थापित किया था। अब उनकी आयु अस्सी वर्ष से ऊपर थी और पुराने संबंधों के कारण मराठे उनका बड़ा आदर करते थे।

दूत फौरन पेशवा के पास ले जाया गया। उसने राजा छत्रसाल का पत्र दिया। पत्र क्या था केवल एक दोहा थाः-

> जो गति भई गजेन्द्र की, सो गति भई आज
> बांकी जात बुन्देलन की, राखो बाजी लाज।

पत्र पढ़कर बाजीराव ने पूछा—क्या तकलीफ है महाराज को?

—श्रीमान! इलाहाबाद के मुगल सूबेदार मुहम्मद खां बंगश ने बुंदेलखंड पर हमला कर दिया है। बुंदेलों ने पूरी ताकत से उसका मुकाबला किया पर मुगलों के कदम रुकते ही नहीं। अब तो परिस्थिति इतनी गंभीर हो गई है कि अगर बाहर से कोई सहायता न मिली तो सारा राज्य ही नष्ट हो जाएगा। महाराज अब वृद्ध हो गए हैं और उन्होंने कहा है कि सारे देश में आप ही ऐसे हैं जो इस विपत्ति को दूर कर सकते हैं। उन्होंने केवल यह दोहा लिख दिया है और मुझसे कहा है कि मैं आपको सारी बात विस्तार से बता दूं।

बाजीराव दूत की सारी बातें शांति से सुनते रहे। उन्होंने कहा कुछ नहीं। दूत ने पूछा—श्रीमान्! मुझे क्या आज्ञा है।

अभी बताता हूं—अपने सचिव को पास बुलाकर उन्होंने कहा—फौरन हुजुरात की फौज को कूच करने का आदेश भिजवा दो। दोपहर से पहले फौज को कूच कर देना चाहिए। सिंधिया और होलकर के पास सांडणी सवार भिजवा दो और उनसे कहो कि मैं राजा छत्रसाल की मदद के लिए जा रहा हूं वे फौरन अपनी सेना लेकर मुझे मिलें।

सचिव के जाते ही उन्होंने अपने निजी सेवक को बुलाया और कहा—मेरी यात्रा की तैयारी कर दो। उपस्थित लोगों में से कुछ खास सरदारों को उन्होंने साथ चलने के

लिए कहा। अपनी गैरहाजिरी में पूना में कोई गड़बड़ी न हो इसकी व्यवस्था भी कर दी।

इन सब कामों में पेशवा व्यस्त थे और अंदर लोग भोजन के लिए उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। जब उन्हें कुछ फुरसत मिली तो पुत्र ने कहा— भोजन के लिए लोग आपका इंतजार कर रहे हैं।



इस विजय के बाद राजा छत्रसाल ने पेशवा के सम्मान में दरबार किया।

—अरे हां! मैं भूल ही गया। तुम लोगों को देर हो गई होगी। तुम लोग खा लो।

—और आप?

— मेरा भोजन तो अब अगले पड़ाव पर ही होगा, बेटे!

—तो क्या आप भूखे ही रहेंगे बाबा?

—भूखा क्यों रहूंगा? चना-चबैना कुछ न कुछ तो साईस साथ लेकर हमेशा ही चलता है। घोड़े पर बैठे-बैठे मैं उसे खा लूंगा।

—पर भोजन यहां कर लेने में भी तो अधिक देर नहीं लगेगी।

—समय बहुत थोड़ा लगेगा। पर इस बात की मन में गांठ मार लो बेटे कि लड़ाई में थोड़ी सी देर भी घातक सिद्ध होती है। और फिर हम जा रहे हैं राजा छत्रसाल की मदद के लिए। अगर कुछ गड़बड़ हो गई तो लोग हंसेंगे कि बुंदेलखंड का सर्वनाश इसलिए हो गया कि पेशवा भोजन करता रहा।

पेशवा बाजीराव को मुगल सूबेदार के विरुद्ध आशातीत सफलता मिली। पूना से बुंदेलखंड तक का लगभग 1500 किलोमीटर का फासला विद्युत गति से पार कर मराठा सेना मुगलों पर टूट पड़ी। मुगल इस आक्रमण की कल्पना भी नहीं कर रहे थे। मराठों ने मुगलों के छक्के छुड़ा दिए। मुगल सेना मैदान छोड़कर भाग खड़ी हुई। मुगल सूबेदार मुहम्मद खां बंगश मुश्किल से अपनी जान बचा पाया। राजा छत्रसाल पर आया संकट टल गया। अब वे पुनः स्वतंत्र थे।

इस विजय के बाद राजा छत्रसाल ने पेशवा के सम्मान में दरबार किया। चारों तरफ आनंद का वातावरण था। वयोवृद्ध राजा छत्रसाल और युवा पेशवा बाजीराव दोनों में खुलकर बातें हुई। राजा छत्रसाल ने पेशवा का बार-बार आभार माना। अंत में यहां तक कह दिया— मेरे अब तक दो बेटे थे। आज से तीन हो गए। आप मेरे सबसे बड़े पुत्र हैं।

राजा छत्रसाल ने यह बात मन से कही थी। उन्होंने झांसी और उसके आस-पास का इलाका पेशवा बाजीराव को व्यक्तिगत जागीर में दिया। मृत्यु के समय उन्होंने अपने राज्य के तीन हिस्से किए और बाजीराव और अपने दो पुत्रों को बांट दिए। पेशवा को उन्होंने एक नर्तकी भी भेंट की। इसका नाम मस्तानी था।

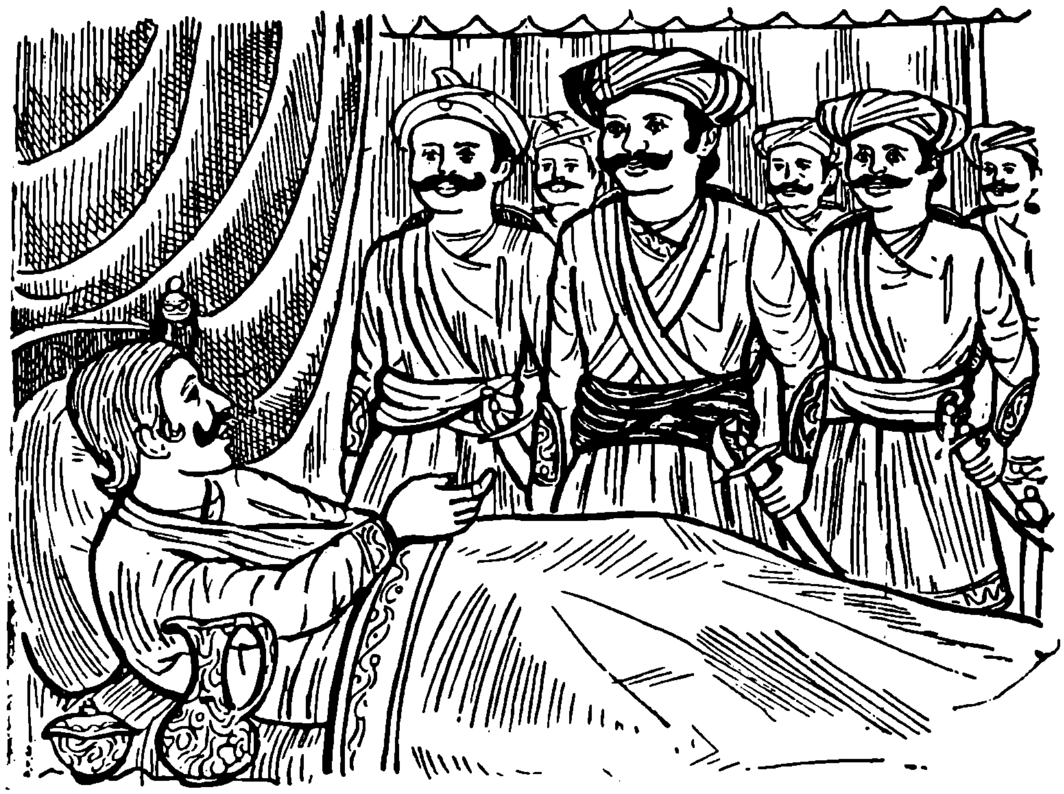
पेशवा की ओर से इस नई जागीर का बंदोबस्त करने के लिए गोविंद पंत खेर नियुक्त हुए। बाद में इनका परिवार झांसी का शासक हो गया। सुप्रसिद्ध रानी लक्ष्मी बाई इसी परिवार की वधू थीं। □

मुझे तोप से उड़ा दो

बंबई के निकट एक जगह है बसई। इसका विदेशी नाम बसीन भी काफी प्रसिद्ध है। यहां पर काफी लंबे समय तक पुर्तगालियों का राज्य था। उनके अत्याचारों से आस-पास के लोग त्रस्त थे। लोगों को जबरदस्ती ईसाई बनाना, जो अड़ जाए उसे समुद्र में डुबो देना—ये सब मामूली बातें थीं। उस समय पेशवा बाजीराव प्रथम मराठा राज्य के सर्वेसर्वा थे। जब लोगों ने उनसे बार-बार सहायता की मांग की, तो उन्होंने बसई को विदेशियों के चंगुल से मुक्त करने का निश्चय किया। यह काम उन्होंने सौंपा अपने छोटे भाई चिमाजी अप्पा को।

अप्पा अपने बड़े भाई की ही तरह शूर थे। उस समय भारत में बाजीराव और अप्पा की जोड़ी को लोग राम और लक्ष्मण की उपमा देते थे। वे बहुत बड़ी सेना लेकर बसई पहुंच गए। बसई के किले के एक ओर जमीन और दूसरी ओर समुद्र है। मराठों की स्थल सेना ने भूमि की ओर से किले पर घेरा डाला और मराठों की नौ सेना के जहाजों ने समुद्र की ओर से किले की नाकाबंदी की। पर कोई परिणाम नहीं निकला। पुर्तगालियों ने किले के बचाव की पूरी तैयारी की हुई थी। रसद, पानी, गोला-बारूद काफी मात्रा में अंदर इकट्ठी कर ली गई थी। भौगोलिक दृष्टि से भी किला इस तरह बना था कि वह लंबे घेरे का मुकाबला कर सके।

मराठों की स्थल और जल सेना ने बार-बार किले पर कब्जा करने का प्रयत्न किया। उनकी तोपों के गोले किले के अंदर गिरते थे, पर उनसे कोई खास नुकसान होता नहीं मालूम पड़ता था। मराठों की सेना ने कई बार हमला किया। इसमें उनके काफी आदमी मारे गए और उन्हें पीछे हटना पड़ा। एकाएक चिमाजी अप्पा भी बीमार हो गए। सेनापति की बीमारी और बार-बार की असफलता के कारण मराठा सेना में निराशा फैल गई। बसई पर कब्जा करना असंभव है यह भावना सैनिकों में तो क्या सरदारों में भी फैल चुकी थी। इधर पुर्तगाली भी लंबे घेरे से ऊब चुके थे। बाहरी दुनिया से



–आप मुझे तोप के आगे बांध कर गोला दागिए। इससे जीवित नहीं तो कम-से-कम मरने के बाद तो मेरे शरीर का कुछ भाग किले के अन्दर पहुंच ही जाएगा।

उनका संपर्क टूट चूका था। अंदर रसद समाप्त हो रही थी। वे संधि करने को उत्सुक थे। मराठा सरदारों का विचार था कि संधि का प्रस्ताव मान लेना चाहिए और बदले में पुर्तगालियों से ऐसी शर्तें मनवा लेनी चाहिए जिससे उस क्षेत्र में रहने वाले लोगों पर होने वाले अत्याचार बंद कर दिए जाएं ।

मराठा सरदार इन्हीं सब बातों पर विचार करने के लिए चिमाजी अप्पा के खेमे में एकत्र हुए। उन्होंने अप्पा से कहा– आप बीमार हैं। बसई सर होती नजर नहीं आती। फौज थक चुकी है। पुर्तगाली भी अब संधि करना चाहते है। हमारा विचार है कि इस स्थिति से लाभ उठाना चाहिए।

अप्पा ने उनकी बात शांति से सुनी। उत्तर में उन्होंने कहा—मुझे नहीं मालूम था कि आप लोग इतनी हिम्मत हार चुके हैं। आपकी बात मुझे स्वीकार है लेकिन मेरी भी एक शर्त है।

—आज्ञा कीजिए। सरदारों ने कहा।

—मैं पूना से बसई पर विजय प्राप्त करने का बीड़ा उठाकर चला था। वह तो होता नहीं मालूम पड़ता। मैं खाली हाथ पूना जाऊंगा नहीं। एक ही उपाय है।

—वह क्या।

—आप मुझे तोप के आगे बांधकर गोला दागिए। इससे जीवित नहीं तो कम-से कम मरने के बाद तो मेरे शरीर का कुछ भाग किले के अंदर पहुंच ही जाएगा। मेरा प्रण पूरा हो जाएगा। आप भी सब पुर्तगालियों से संधि कर अपने बाल बच्चों के पास जा सकेंगे।

अप्पा की बात सुनकर सरदार दंग रह गए। उनके उतरे हुए चेहरे देखकर अप्पा ने कहा—हिम्मत मत हारो । मैं भी कुछ स्वस्थ हो रहा हूं। अगर हम सब निश्चय के साथ लड़ेंगे कि किला जीतना ही है तो अवश्य विजयी होंगे।

मराठों ने किला जीतने के लिए नई योजना बनाई। उन्होंने अपनी छावनी से किले की दीवार तक चुपचाप सुरंग बनाने का काम आरंभ कर दिया। इस प्रयास की ओर किसी का ध्यान न जाए इसलिए उन्होंने किले पर छिटपुट हमले भी जारी रखे। इसी बीच मराठों की नौसेना ने एक पुर्तगाली जहाज पकड़ा। यह जहाज मराठों की नौसेना की नाकाबंदी तोड़ कर बाहर निकलने की कोशिश में था। बसई के पुर्तगाली किलेदार की स्त्री इस पर थी। उसे जब चिमाजी अप्पा के पास लाया गया तो उन्होंने कहा—इसे क्यों ले आए? हमारी लड़ाई पुर्तगालियों से है उनकी स्त्रियों से नहीं।

उन्होंने उसे पूरे सम्मान के साथ किले के अंदर भेजा। उसने अपने पति से कहा कि मराठे लड़ाई में भी स्त्रियों का इतना ध्यान रखते हैं। उनका सेनापति नीतिमान है उस पर विजय पाना कठिन है।

इसी बीच मराठों का सुरंग खोदने का काम पूरा हो चुका था। सुरंग किले की दीवार तक खोदी जा चुकी थी और उसे बारूद से भर दिया गया था। मौका देखकर मराठों

ने बारूद में आग लगा दी। भयानक विस्फोट हुआ और किले की एक ओर की दीवार बैठ गई। मराठों की हिम्मत बढ़ गई और पुर्तगालियों ने समझ लिया कि अब बसई का बचना मुश्किल है।

उनके किलेदार ने बसई का किला सौंप देने की और लड़ाई बंद करने की इच्छा प्रकट की। चिमाजी अप्पा ने अब उनकी बात रख लीं।

किलेदार ने किला सौंप दिया और वह अपने परिवार को लेकर जहाज से चला गया। बसई मुक्त हुई और उस पर मराठों का झंडा लहराने लगा। □



वीर इब्राहीम खां

अहमदशाह अब्दाली का मुकाबला करने के लिए आई हुई मराठा सेना अब संकट में फंस गई थी। मराठों की युद्ध-नीति के विपरीत और अनुभवी सरदारों की बात ठुकरा कर, सेनापति सदाशिव राव भाऊ ने अब्दाली से सीधी टक्कर लेने का फैसला किया था। उन्हें आरंभ में कुछ सफलता भी मिली। मराठों ने दिल्ली पर कब्जा कर लिया और कुंजपुरा की लड़ाई में भी वे विजयी रहे। पर जब मराठे पानीपत पहुंचे तो अब्दाली ने किसी को पता चले इससे पहले ही रात के अंधेरे में यमुना पार कर ली। मराठों का दिल्ली से संबंध टूट गया, रसद आनी बंद हो गई और सेना के सिपाही और घोड़े भूख से त्रस्त हो गए।

मराठों की सेना में पेशवा की जो अपनी खास टुकड़ियां थीं उन्हें हुजुरात कहा जाता था। इनके प्रधान थे इब्राहीम खां गारदी। इन टुकड़ियों का प्रशिक्षण विदेशी तरीके से हुआ था। इनकी चुस्ती, वीरता और रणकुशलता का सभी लोहा मानते थे और मराठों को इन पर बड़ा भरोसा था। उदगीर और अन्य कई लड़ाइयों में ये अपना जौहर दिखा चुकी थीं। इनके शस्त्रास्त्र भी अच्छे थे और सबसे महत्व की बात यह थी कि इन टुकड़ियों के साथ अपनी तोपें भी थी।

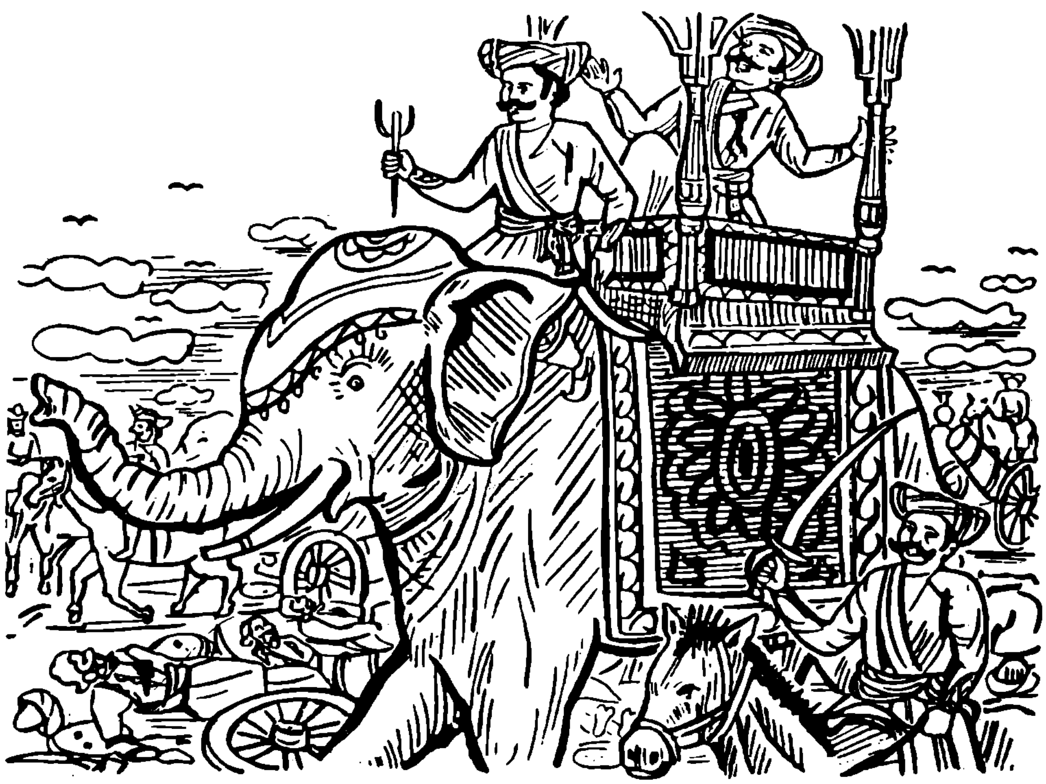
मराठों के सामने केवल एक ही रास्ता था। वह था राह रोक कर खड़ी अब्दाली की फौज से लड़ते हुए घेरे से निकलना। भुखमरी से सेना कमजोर हो रही थी और यह आवश्यक था कि यह टक्कर जितनी शीघ्र हो उतना अच्छा। देर होने से तो सेना और भी कमजोर हो जाती।

इसी समय अहमदशाह ने इब्राहीम खां के पास उपहार भेजा और कहलवाया—तुम मेरे खिलाफ हिंदुओं की ओर से लड़ रहे हो? क्या तुम्हें धर्म का कुछ भी लिहाज नहीं?

अभी कुछ नहीं बिगड़ा है। अब भी सम्हल जाओ और हमसे आ मिलो नहीं तो कुत्ते की मौत मरोगे।

मजहब के नाम पर किए गए इस आग्रह को और जोरदार बनाने के लिए यह वादा भी किया था कि अगर इब्राहीम खां मराठों का साथ छोड़ दें तो उन्हें नवाब की उपाधि और स्वतंत्र राज्य मिलेगा।

इब्राहीम खां ने इस संदेश का उत्तर बड़ी निर्भीकता से दिया। उन्होंने कहा— हम लोग इसी देश के रहने वाले हैं और आप विदेशी हैं। मैंने मराठों का नमक खाया है उसका फर्ज जरूर अदा करूंगा। जो परिणाम हो उसे मैं भुगतने को तैयार हूं। अहमदशाह ने जो सौगात भेजी थी उसे लौटाते हुए उन्होंने अपनी ओर से शाह को दो मुट्ठी बारूद और पांच गोलियां भेंट में भेजीं।



एकाएक उनके गोली लगी और कोई कुछ करे इससे पहले उनके प्राण पखेरू उड़ गए।

पानीपत की तीसरी लड़ाई आरंभ हुइ। मराठे चाहते थे अब्दाली का घेरा तोड़कर बच निकलना। इब्राहीम खां के नेतृत्व में हुजुरात की टुकड़ियां सबसे आगे थीं। इनका काम था बाकी सेना के लिए रास्ता बनाना। यह काम बड़ा कठिन था, बड़ी जिम्मेदारी का था और वीरता, धैर्य और पूरे अनुशासन से ही पूरा हो सकता था। हुजुरात की टुकड़ियों ने अब्दाली की सेना के दांत खट्टे कर दिए । मैदान अफगानों और मराठों की लाशों से पट गया। पर हुजुरात की सेना में जो अनुशासन था वैसा बाकी सेना में न था। उसने जल्दबाजी की और मराठा घुड़सवारों ने जल्दी-जल्दी में हमला कर दिया। पर अब्दाली की सेना के आगे उनकी कुछ न चली।

अब तक दोपहर हो चुकी थी। पानीपत के सारे क्षेत्र में मराठे और अफगान जूझ रहे थे। भारत के इतिहास का एक निर्णायक युद्ध अपनी चरम सीमा पर पहुंच गया था। स्वयं सदाशिवराव भाऊ, पेशवा की गद्दी के उत्तराधिकारी विश्वासराव, महादजी और जनकोजी सिंधिया, मल्हारराव होलकर, शमशेर बहादुर गायकवाड़ विंचूरकर , सभी प्रमुख मराठा सरदार जूझ रहे थे। अब्दाली की एक न चलती थी। मालूम पड़ता कि बाजी मराठों के ही हाथ रहेगी।

पर अकस्मात् मराठों पर वज्राघात हुआ। विश्वास राव पेशवा हाथी पर बैठे युद्ध का संचालन कर रहे थे। एकाएक उनके गोली लगी और कोई कुछ करे इससे पहले उनके प्राण पखेरू उड़ गए। पास ही सदाशिवराव भाऊ भी दूसरे हाथी पर थे। भतीजे की मृत्यु से वे मर्माहत हो गए। अपने दुःख में भूल गए कि उन पर सारी सेना के संचालन की जिम्मेदारी है। वे हाथी से उतर पड़े और दोनों हाथों में तलवारें ले लड़ने लगे। सेना ने जब पेशवाकुल के दोनों हाथी खाली देखे तो उसमें भगदड़ मच गई। पर तब भी इब्राहीम खां अपनी जगह पर दृढ़ थे। हुजुरात काफी कट चुकी थी, वे स्वयं जख्मी हो चुके थे पर फिर भी प्राणपण से लड़ रहे थे।

मल्हारराव होलकर आरंभ से ही अब्दाली से इस प्रकार सीधी टक्कर लेने के विरोधी थे। उनका कहना था कि मराठों को अपनी पुरानी युद्धनीति से ही काम लेना चाहिए अर्थात् छिटपुट हमलों और रसद तोड़कर उसे त्रस्त करना चाहिए और जब अब्दाली की सेना थक जाए तब उस पर हमला कर उसे खदेड़ना चाहिए। जब सदाशिवराव भाऊ को यह विश्वास हो गया कि मराठे लड़ाई हार रहे हैं तो उन्होंने मल्हारराव के पास संदेश भेजा—मैं शत्रु को रोके रखता हूं आप बच्चों, स्त्रियों को लेकर निकल

जाइए। जहां तक सभव हो हर परिवार का कम-से-कम एक पुरुष बच निकले जिससे कोई निर्वंश न हो।

पर कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्होंने इस संदेश को सुनकर अनसुना कर दिया। इनमें प्रमुख थे जनकोजी सिंधिया। उनकी आयु केवल अठारह वर्ष की थी और वे विश्वासराव पेशवा के बालसखा थे। उन्होंने कहा—जब मेरा मित्र वापस नहीं आया तो मैं कैसे जा सकता हूं?

जब इब्राहीम खां को यह संदेश मिला तो उन्होंने उत्तर दिया— मेरी टुकड़ियां पेशवा की अपनी हैं और इसी कारण उन्हें हुजुरात कहा जाता है। विश्वासराव मारे गए, भाऊ साहब ने प्रण किया है कि जाएंगे नहीं। तो हुजुरात कैसे वापस जा सकती है? जहां हुजूर वहां हुजुरात । और फिर मैं अगर वापस गया तो क्या मुंह दिखऊगा? सारी दुनिया कहेगी कि मुसलमान बेईमान हो गया।

इब्राहीम खां ने अपना वादा पूरा किया। वे अंत तक डटे रहे। अंत में वे इतने आहत हो गए कि बेहोश हो गए और अब्दाली के सैनिकों ने उन्हें बंदी बना लिया। अब्दाली के सैनिकों ने उन्हें मार डाला पर वे झुके नहीं। □

रामशास्त्री की निर्भीकता

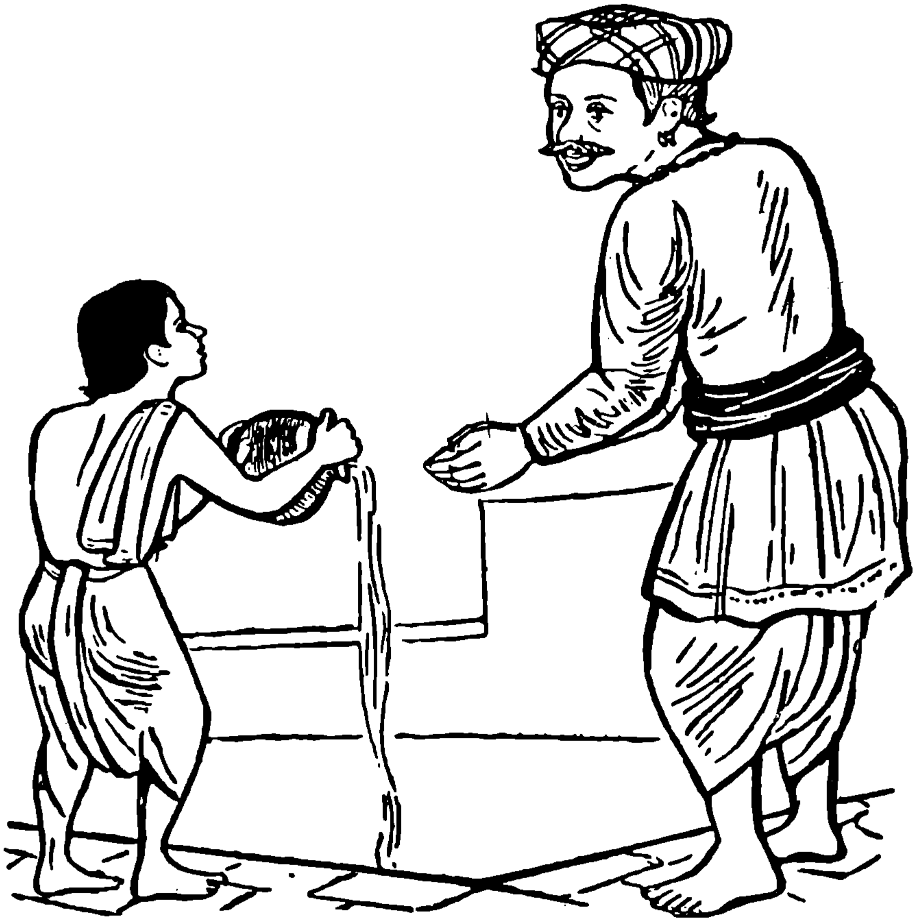
लगभग दो सौ वर्ष पहले की बात है। दस-ग्यारह वर्ष का एक बालक मालिक के हाथ धुला रहा था। अचानक उसकी नजर मालिक के कान में पड़ी भिकबाली पर पड़ी। इसे पहनने का तब रिवाज था। बाएं कान के हिस्से से छेद कर सोने के चमचमाते तार में पिरोया हुआ मोती जगमगा रहा था। वह देखता रहा मोहित होकर । हाथ धुलाने का उसे खयाल ही न रहा। पानी की धार हाथ पर नहीं नीचे गिर रही थी।

—तुम्हारा ध्यान किधर है, राम्या? मालिक ने झुंझला कर पूछा।

—जी! भिकबाली देख रहा था। लड़के ने सकुचा कर कहा।

—हूं ! भिकबाली देख रहे थे। उसे पहनने के लिए चाहिए पैसा। वह आता है पढ़ने से और पढ़ाई तुमसे होती नहीं। भिकबाली की ओर देख रहा था। अनपढ़ पानी भरने वाले को भिकबाली पहनने के सपने नहीं संजोने चाहिए।

बालक चुप रहा। अपनी हालत वह जानता था। बाप मर चुका था। मां उसकी शरारतों से तंग आ चुकी थी। उसे पढ़ाने की उन्होंने बड़ी कोशिश की पर उनका प्रयत्न बेकार रहा। तंग आकर उन्होंने उसकी नौकरी लगवा दी। काम था पानी भरना, पूजा की सामग्री सजाना आदि । मालिक की उस पर कृपा थी, काम आसान था, पढ़ाई से छुटकारा मिल गया था और मां भी पास न थी कि रोज-रोज उसे पढ़ने के लिए टोकती । पर मालिक की बात बालक को लग गई। बाप की याद आ गई। वे गरीब थे पर विद्वान थे। और वह था केवल एक पानी भरने वाला। वह जानता था कि मालिक ने सच ही कहा है। इस कारण उसे और भी बुरा लगा। अगर वह पढ़ा हुआ होता तो उसे कोई क्यों ताना देता?



तुम्हारा ध्यान किधर है राम्या? मालिक ने झुंझलाकर पूछा।
—जी! भिकबाली देख रहा था। लड़के ने सकुचा कर कहा।

दूसरे दिन सवेरे बालक राम्या नदारद था। उसकी बड़ी खोज की गइ पर पता न चला। मां रोने लगी। और इधर राम्या पैदल जा रहा था विद्या के केंद्र काशी की ओर। लगभग सोलह सौ किलोमीटर का यह मार्ग उस दस-ग्यारह वर्ष के लड़के ने पैदल तय किया। काशी जाकर उसकी तपस्या आरंभ हुई । सौभाग्य से गुरु भी अच्छे मिले और उसने मन लगाकर पढ़ना शुरू किया। कई वर्ष बीत गए। राम्या पढ़ता रहा। उसकी लगन देखकर गुरु उस पर बहुत प्रसन्न थे। उसकी बुद्धि और विद्वत्ता की सभी सराहना करते थे। पढ़ाई पूरी हो गई। अब राम्या पानी भरने वाला नहीं रह गया था। बल्कि रामशास्त्री हो गया था, सभी शास्त्रों में पारंगत! वह वापस घर गया। बूढ़ी मां विद्वान बेटे को देखकर खुशी से फूली न समाई। रामशास्त्री का सभी जगह मान हुआ। पेशवा के राज्य में उसे प्रधान न्यायाधीश का पद मिला।

न्यायाधीश के रूप में रामशास्त्री ने बड़ा नाम कमाया। यदि कोई भी अन्याय करता तो वह उन्हें सहन न होता था। वे निर्भीकता से अपनी बात कहते थे। न्यायदान में सबको बराबर समझते थे– यह बड़ा है, यह छोटा यह भेदभाव उनके मन में न था।

एक बार उन्हें पता चला कि पेशवा माधवराव पूजापाठ में बहुत अधिक समय लगा रहे हैं और इस कारण राजकाज की उपेक्षा हो रही है। उन्होंने पेशवा से कहा—राजा का कर्त्तव्य है कि वह राजकाज ठीक ढंग से चलाए। अगर वह ऐसा नहीं करता तो पाप करता है। उसका पूजापाठ बेकार है। आपको पूजापाठ करना है तो मेरे साथ काशी चलिए, आप हम दोनों गंगा के किनारे भगवद्-भजन में जीवन बिताएंगे। राज्य कोई और करेगा।

पेशवा माधवराव का बड़ा रौब था। उनसे ऐसी बात कहना किसी हिम्मत वाले पुरुष का ही काम था। पर पेशवा उतने ही योग्य भी थे। उन्हें रामशास्त्री की बात सत्य मालूम पड़ी और वे अपनी गलती समझ गए।



[illegible] आरोप आप पर सिद्ध हो गया और आप मृत्युदंड के भागी है।

पर रामशास्त्री की निर्भीकता की एक बड़ी कसौटी अभी बाकी थी। माधवराव युवावस्था में ही राजयक्ष्मा से मर गए। उनके छोटे भाई नारायणराव पेशवा हुए। उनकी आयु कम थी। दूरदर्शिता नहीं थी। उनके चाचा थे रघुनाथराव। वे बड़े वीर थे। उनकी इच्छा थी स्वयं पेशवा होने की। वे बराबर भतीजे के विरुद्ध षड्यंत्र रचते थे। पेशवा नारायणराव का व्यवहार भी कुछ ऐसा था कि उनके शत्रुओं की संख्या बढ़ने लगी।

एक दिन पेशवा दोपहर का भोजन समाप्त कर निकले तो सेना के सिपाहियों ने उनका महल घेर लिया। बहाना था वेतन के बकाए का। पर वास्तव में चाचा का उद्देश्य यह था कि सिपाहियों के हाथों पेशवा मारे जाएं तो वे गद्दी पर तुरंत आसीन हो जाएं। सिपाही मारते-काटते महल के अंदर घुस गए। महल के दरवाजे बंद थे, बाहर से सहायता पहुंच नहीं सकती थी। असहाय नारायणराव ने जान बचाने की बड़ी कोशिश की। चाचा से भी प्राणों की भीख मांगी। पर कोई असर न हुआ। सिपाहियों ने नारायणराव की हत्या कर दी। दस अन्य व्यक्ति भी मारे गए। पेशवा का महल पेशवा के ही खून से रंग गया। वेतन का बहाना बना कर सेवकों ने ही मालिक का वध कर दिया।

अब रघुनाथराव के मार्ग में कोई कांटा न रहा। सिपाहियों ने पेशवा का वध होते ही उनके नाम की मुनादी करा दी। इससे तो और भी स्पष्ट हो गया कि नारायणराव की हत्या में उनका हाथ था और सिपाहियों को उन्होंने ही हत्या के लिए उकसाया था। पर अब हो क्या सकता था? नारायणराव की हत्या हो गई थी और बड़े-बड़े सरदारों ने भी लाचार होकर रघुनाथराव को पेशवा मान लिया। लोग जानते थे कि उन्होंने ही भतीजे की हत्या करवाई है पर यह कहे कौन? रघुनाथराव बडे दबंग थे और अब तो राजकाज भी उनके हाथ में था। जो मुंह खोले उसकी जबान वे हमेशा के लिए बंद कर सकते थे।

पर यह हिम्मत दिखाई रामशास्त्री ने। नारायणराव की हत्या के बाद ही उन्होंने जांच-पड़ताल आरंभ कर दी थी। इसका बड़ा विरोध भी हुआ पर उन्होंने इसकी परवाह न की। हत्या का संबंध बड़े-बड़े आदमियों से हो सकता है इसे भुलाकर उन्होंने अपनी जांच जारी रखी मानो हत्या के किसी सामान्य मुकदमें की कार्यवाई पूरी कर रहे हों। इस जांच के फलस्वरूप वे इस निर्णय पर पहुंचे कि पेशवा नारायणराव

की हत्या के प्रधान दोषी उनके चाचा रघुनाथराव हैं और इस षड्यंत्र में पचास व्यक्तियों का हाथ है।

पर अब एक अन्य अड़चन सामने आई। उस समय न्यायाधीश, कौन दोषी है और उसे क्या सजा मिलनी चाहिए केवल यही फैसला दे सकता था। दंड देने का अधिकार पेशवा को था। रघुनाथराव अब पेशवा थे। उनसे कौन जाकर कहे कि आप हत्यारे हैं? लेकिन रामशास्त्री कब पीछे हटने वाले थे? उन्होंने पेशवा से कहा कि हत्या का आरोप आप पर सिद्ध हो गया है और आप मृत्युदंड के भागी हैं।

आस-पास खड़े लोग अवाक् होकर सुनते रहे। ठीक है, रामशास्त्री प्रधान न्यायाधीश हैं, पर इनकी हिम्मत? क्या इन्हें मालूम नहीं कि इस धृष्टता का क्या परिणाम हो सकता है? सबसे अधिक चकित थे रघुनाथराव। क्रोध दिखाने से कोई लाभ न था क्योंकि इससे उनका अपराध और स्पष्ट हो जाता । उनका कहना था कि पेशवा की हत्या की जांच करने का काम प्रधान न्यायाधीश के अधिकार से बाहर है। रामशास्त्री का कहना था कि राज्य में हुए प्रत्येक अपराध की जांच करने का न्यायाधीश को अधिकार है और उसके सामने बड़े-छोटे का कोई भेद नहीं, सब बराबर हैं।

दोनों अपनी बात पर अड़े रहे। रघुनाथराव ने रामशास्त्री को प्रधान न्यायाधीश के पद से बरखास्त कर दिया। रामशास्त्री ने कहा— जहां ऐसा अन्याय होता हो वहां मै पानी भी नहीं पीऊंगा।

वे पूना छोड़कर अपने गांव चले गए।

रामशास्त्री का झगड़ा न्याय के लिए था। उनकी बात खाली नहीं गई। रामशास्त्री ने रघुनाथराव को हत्या के लिए दोषी ठहराया इससे लोगों का संदेह दृढ़ हो गया। मराठा राज्य के बड़े-बड़े सरदार और राजनीतिज्ञों ने एक होकर रघुनाथराव को गद्दी से हटाया। नारायणराव की पत्नी गर्भवती थी। उनके जब पुत्र हुआ तो इस बालक को उन्होंने पेशवा की गद्दी पर बैठाया।

इस परिवर्तन के बाद रामशास्त्री से फिर प्रधान न्यायाधीश का पद स्वीकार करने के लिए कहा गया। पर वे तभी तैयार हुए जब उन्हें यह लिखित आश्वासन दिया गया कि शासक न्याय के काम में कोई हस्तक्षेप नहीं करेंगे और न्यायाधीश जो फैसला देंगे उसे कार्यान्वित करेंगे। □

नाना फडणवीस की चतुराई

पेशवा राज्य के अंतिम दिनों में आपसी झगड़े और स्वार्थ के कारण राज्य की जड़ें खोखली हो गई थीं। हर सरदार अपना व्यक्तिगत स्वार्थ-भर देखता था, राज्य और जनता का हित देखने की किसी को फुरसत न थी। राज्य यदि कायम था तो पेशवा के दीवान नाना फडणवीस के कारण ही। उनकी चतुराई और राजनीति-निपुणता का अंग्रेज भी लोहा मानते थे। सारे भारत में कहावत प्रसिद्ध थी—'जब तक नाना तब तक पूना' अर्थात् जब तक नाना फडणवीस जीवित हैं तभी तक पूना की पेशवाई भी कायम रहेगी।

नाना बड़े व्यवहार-कुशल और हाजिर जवाब थे। राजे-महाराजे उनकी परीक्षा लेने के लिए उनके पास समस्याएं भेजते थे और उनसे जवाब पूछते । उस समय के निज़ाम को तो इसका विशेष शौक था। एक बार निज़ाम ने पेशवा के पास एक बहुत बड़ा हाथी भेजा और लिखा—नाना से कहिए वे इस हाथी का ठीक-ठीक वजन बताएं।

उस समय भारत में इतने बड़े मशीनी कांटे नहीं थे जिन पर हाथी को चढ़ाकर उसका वजन किया जा सके। फिर हाथी का वजन कैसे मालूम किया जाए?

नाना ने इस प्रश्न पर थोड़ी देर विचार किया और फिर हाथी के महावत से कहा—तुम कल हाथी को नदी के तीर पर ले आना, वहीं वजन बता दिया जाएगा। उन्होंने यह भी आज्ञा दी कि नदी के तट पर एक बड़ी नौका, बहुत-से पत्थर और तराज़ू तथा बाट भी तैयार रखे जाएं।

दूसरे दिन प्रातःकाल नाना नदी के किनारे गए। मंगाई गई सब वस्तुएं आ गई हैं यह जान लेने के बाद उन्होंने महावत से हाथी को नौका पर चढ़ाने के लिए कहा। हाथी जब नौका पर चढ़ा तो वह पानी में और ज्यादा डूब गई। जहां तक नौका डूबी थी वहां पर नाना ने एक चिन्ह लगाया और तब हाथी को नीचे उतरवाया।



हाथी जब नौका पर चढ़ा तो वह पानी में और ज्यादा डूब गई।

उसके बाद उन्होंने नाव पर पत्थर लदवाने आरंभ किए। पत्थरों का ढेर बढ़ता गया और उनके बोझ से नाव का पेंदा पानी में डूबने लगा। जब पानी की सतह पहले के चिन्ह तक पहुंच गई तब उन्होंने पत्थर लदवाना बंद किया। उन्होंने आज्ञा दी कि जितने पत्थर नाव पर लादे जा चुके थे उनका वजन किया जाए। बाद में उन्होंने सब पत्थरों के वजन को जोड़ा और महावत के हाथ निज़ाम के पास चिट्ठी भेजी कि हाथी का वजन इस प्रकार ज्ञात किया गया और इतना निकला।

इसी तरह एक बार एक धनी आदमी के तीन लड़कों में घोड़ों के बंटवारे के बारे में झगड़ा हुआ। वह आदमी सत्रह सुंदर घोड़े छोड़ गया था। और उसने लड़कों से कहा था कि बड़ा लड़का आधे घोड़े ,मंझला लड़का एक-तिहाई और छोटा घोडों का नवां हिस्सा लेगा। लड़कों में बटवारे को लेकर बड़ा झगड़ा हुआ क्योंकि सत्रह घोड़े इस प्रकार बांटना असंभव था। और कोई भी लड़का अपने हिस्से में कोई भी कमी बरदाश्त करने को या अधिक देने को तैयार न था। अंत में वे तीनों नाना के पास पहुंचे।

नाना ने उनकी बात सुनी और कहने लगे—सत्रह का आधा, तिहाई या नवां हिस्सा करना तो असंभव है, खैर मैं कोशिश करता हूं। अगर तुममें से हर एक को उसके हिस्से से कुछ अधिक मिले तो कोई आपत्ति तो नहीं? झगड़ा निपटाने के लिए एक घोड़ा मैं दे दूंगा। लड़के यह सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। कहां तो हिस्सा मिलना ही दुश्वार था और कहां अधिक देने को नाना कहने लगे।

नाना ने एक मरियल टट्टू तांगे से खुलवाकर उन सुंदर घोड़ों के बीच खड़ा कर दिया। उसे देख तीनों लड़के कहने लगे— हम उसे कभी नहीं लेंगे।

नाना ने कहा—ठीक है। जिसे नहीं चाहिए वह न ले। कोई जबरदस्ती नहीं है।

उसके बाद उन्होंने छोटे लड़के से कहा—तुम्हें नवां हिस्सा चाहिए। यह दो घोड़ों से कुछ कम होता है पर कोई बात नहीं तुम दो घोड़े ले लो।

मंझले लड़के ने भी अपने हिस्से के छः घोड़े निकाल लिये। तब नाना ने बड़े लड़के से कहा—भाई, तुम्हें तो साढ़े आठ घोड़े मिलनें चाहिए। पर जब सबको मैंने अधिक दिया है तब तुम भी पूरे नौ घोड़े ही ले लो। बड़े लड़के ने भी नौ घोड़े ले लिये । तीनों लड़को ने चुन-चुनकर अच्छे घोड़े लिये थे और केवल बेचारा मरियल टट्टू ही बाकी रह गया था। नाना ने तांगे वाले से कहा—ले जा भाई अपना घोड़ा । इसी के कारण यह झगड़ा भी निपट गया।

तीनों लड़के यह सोचते ही रह गए कि उन्हें हिस्से से अधिक घोड़े कैसे मिले? □

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

ISBN : 81-230-0538-5
मूल्य : 50.00 रुपये

